संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १०
अंक : ८४
दिसम्बर १९९९

हिन्दी

श्रद्धांजली विशेषांक

जिस माँ ने था ध्यान सिखाया...
ममता की दी शीतल छाया...

सेवा, सादगी और सहिष्णुता की मूर्ति
माँ महँगीबा की गोद में
विश्वविख्यात संत श्री आसारामजी बापू

ऋषि प्रसाद

वर्ष : १०
अंक : ८४
९ दिसम्बर १९९९
सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा
मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-
नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रू. ३००/-
(३) आजीवन : रू. ७५०/-
(डाक खर्च में वृद्धि के कारण)
विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

मृत्यु का रहस्य

❋ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❋

'श्रीमद्भगवद्गीता' में आता है :

न जायते म्रियते वा कदाचि–
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

'यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है । शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता ।' (गीता : २.२०)

परमात्मा कहते हैं :

'हे जीवात्मा ! तू अजर है, अमर है । जिस स्वरूप को जान लेने से तेरी फिर कभी मौत नहीं होती, उसे जानकर अमर हो जा । यही तेरा कर्त्तव्य है ।'

यदि आप परमात्मा की इस बात को मान लो तो आपकी, आपके ससुराल की एवं आपके ननिहाल की सात-सात पीढ़ियों का अर्थात् कुल २१ पीढ़ियों का उद्धार हो जाये ।

भगवान की बात मान लेने से हमारा कल्याण हो जाये, लेकिन हम करते क्या हैं ? हम दोस्त की बात मानते हैं, संबंधियों की बात मानते हैं, परिवारवालों की बात मानते हैं और अपनी इच्छा-वासना पूरी करने के पीछे सारा जीवन खपा देते हैं और जन्म-मृत्यु के चक्र में उलझ जाते हैं । दूसरों की बातें तो सदियों से मानते आ रहे हो किन्तु यदि एक बार भी परमात्मा की बात मान लो तो फिर जीते-जी मुक्ति पाना आपके लिए सहज हो जायेगा ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥

'जैसे इस मनुष्य देह में जीवात्मा की बाल्यावस्था, जवानी और वृद्धावस्था आती है, वैसे ही अन्य प्रकार के शरीरों की प्राप्ति होती है, उस विषय में धीर पुरुष मोहित नहीं होता ।' (गीता : २.१३)

जिस प्रकार कपड़े पुराने एवं जीर्ण-शीर्ण हो जाने पर मनुष्य उन्हें बदलकर नये कपड़े धारण करता है, वैसे ही यह शरीर जब बाल्यावस्था एवं यौवनावस्था को पार कर जरावस्था में पहुँचता है तब हमारी आत्मा इसको त्यागकर नया शरीर धारण करती है । अतः इसमें दुःखी होने की, भयभीत होने की क्या बात है ? पुराने कपड़े उतारकर नये कपड़े पहनने में रुदन किस बात का ? पुराना झोंपड़ा छोड़ नये महल में जाने पर शोक किस बात का ? पुरानी जीर्ण-शीर्ण कार छोड़कर नयी चमचमाती हुई कार में बैठने में भय किस बात का ? इसी प्रकार जब यह शरीर पुराना हो जाता है, जर्जर हो जाता है तब प्रकृति माता इस शरीर को उठाकर, जीव को अपनी गोद में ले लेती है और कुछ समय आराम करवाकर फिर उसे नये शरीर में भेज देती है । यह तो उस अनंत की, विराट की यात्रा में, मंजिल तक पहुँचने की यात्रा में एक

> *मृत्यु और जन्म तो प्रकृति का खेल है । भगवान श्रीराम के होते हुए भी उनकी माँ को विधवा होना पड़ा था । जिनकी गोद में भगवान खेले, उन पिता दशरथ को भी 'हाय राम ! हाय राम !' कहते हुए संसार से आखिर जाना ही पड़ा ।*

प्रक्रियामात्र है, पड़ावमात्र है। जैसे कन्या ससुराल से थक -हारकर कुछ तरोताजा होने के लिए मायके जाती है, वहाँ कुछ दिन अपनी माँ के साथ स्वतंत्र होकर रहती है और माँ कुछ दिन बाद उसे समझाकर, सजा-धजाकर ससुराल में पति के घर भेज देती है, वैसे ही जब जीव प्रकृति माता की गोद में जाता है तो वह करुणामयी प्रकृति माँ उसे फिर से नूतन शरीर में नूतन प्राण देकर संसार में भेज देती है और वह जीव अपनी आगे की यात्रा शुरू कर देता है। फिर चिंता, भय, शोक और रुदन किस बात का ?

मृत्युरूपी महा निद्रा में गोता मारकर जीव पुरानी झंझटों, तनावों आदि को भूल जाता है, तरोताजा हो जाता है और नये सिरे से अपनी जीवन-यात्रा का आरंभ करता है।

रोना ही हो तो इस बात के लिए रोओ कि न जाने कितने शरीर मिलने के बाद यह मानव-तन मिला है और अगर इस मनुष्य शरीर में अपना कल्याण नहीं किया तो फिर कब करेंगे ? अथवा तो यूँ मान लो कि दिनभर की थकान को मिटाने के लिए जैसे रात्रि की नींद नितांत जरूरी है, वैसे ही वर्षों से चली आ रही इस यात्रा में 'मेरे-तेरे' की, राग-द्वेष की, काम-क्रोध की थकान मिटाने के लिए मृत्युरुपी रात्रि की जरूरत है, नहीं तो सदैव इस घुटनभरे माहौल में रहना मुश्किल हो जाये।

यह मृत्यु ही है जो इन्सान के जीवन में नम्रता, समता, स्नेह और सहानुभूति को पोसती है। अगर मृत्यु नहीं आती एवं सभी अमर होते तो पत्थर की तरह निष्क्रिय एवं कठोर होकर पड़े रहते। 'मृत्यु जीवन का अनिवार्य अंग है...' यह सोचकर ही इन्सान परलोक का कुछ विचार करता है। 'मृत्यु तो आने ही वाली है... अधिक इकट्ठा करके भी साथ क्या ले जाएँगे ? चलो, थोड़ा-बहुत दान-पुण्य करते हैं ताकि परलोक सँवर जाये...' यह सोचकर भी इन्सान लोभ छोड़ते हैं, संग्रह में थोड़ा संयम बरतते हैं, सत्कर्म में लग जाते हैं। जीवन को सद्‌गुणों से महकाने के लिए यह मृत्युरूपी रात्रि उतनी ही जरूरी है जितनी जीवनरूपी सुबह।

कबीरजी ने कहा है :

जा मरने से जग डरे, मोरे मन आनंद।
कब मरिये कब पाइए, पूरण परमानंद ।।

अभी तक तो हम इस देहरूपी घड़े को 'मैं' मानकर सजाते-सँवारते रहे लेकिन आज पता चल गया कि इसके फूटने से इसमें व्याप्त आकाश का कुछ नहीं बिगड़ता। संत-महापुरुष तो जानते हैं कि मृत्यु शरीर की होती है, हमारी (आत्मा की) नहीं। वे तो अपने पूर्ण स्वरूप को पाये हुए होते हैं और जो संतत्व को उपलब्ध होने की ओर अग्रसर हो रहे हैं, वे भी शोक क्यों करें ?

मृत्यु और जन्म तो प्रकृति का खेल है। भगवान श्रीराम के होते हुए भी उनकी माँ को विधवा होना पड़ा था। जिनकी गोद में भगवान खेले, उन पिता दशरथ को भी 'हाय राम ! हाय राम !' कहते हुए संसार से आखिर जाना ही पड़ा। यह तो परमात्मा की कृपा है, व्यवस्था है कि कभी शरीर दिया तो कभी शरीर छीन लिया। अगर जीव ने अपने वास्तविक स्वरूप को पा लिया तो फिर परमात्मा ने नया शरीर नहीं दिया और जीव मुक्त हो गया।

जीवात्मा की मृत्यु होती है तो उसे एक मुहूर्तपर्यन्त मूर्च्छा-सी रहती है। वह देखता है कि 'ये मेरे कुटुम्बी हैं... रो रहे हैं...' तो वह उस शरीर में मोहवश पुनः प्रवेश करना चाहता है लेकिन प्रकृति की ऐसी व्यवस्था है कि वह उसे उस शरीर में प्रवेश नहीं करने देती। एक मुहूर्त के बाद जब मूर्च्छा हटती है तब उसका शरीर उसके काबिल ही नहीं रहता, शरीर में परिवर्तन हो जाता है। जैसे गंदी बस्ती के झोंपड़े हटाकर नगरपालिका वहाँ सिपाही तैनात कर देती है ताकि लोग वापस वहीं जम न जायें। जब वे लोग कहीं अन्यत्र व्यवस्था कर लेते हैं तब पुलिस वहाँ से हटा ली जाती है। वैसे ही प्रकृति

व्यवस्था करके मृत प्राणियों को मूर्च्छित-सा कर देती है। उनका सूक्ष्म शरीर थोड़े समय तक उसी क्षेत्र में घूमता है लेकिन उस स्थूल शरीर में वह प्रवेश नहीं कर पाता।

जीवात्मा ज्यादा समय तक सूक्ष्म शरीर में न भटके, इसके लिए सनातन धर्म में कई व्यवस्थाएँ की गयी हैं। ऐसी ही एक व्यवस्था यह भी है कि जब किसी शव को स्मशान में जलाकर दागी घर आते हैं तो उनसे पूछा जाता है :

''आप कौन हो ?''

वे कहते हैं : ''हम दागिये हैं।''

''यहाँ से गये थे तब पाँच थे। अभी कितने हो ?''

वे कहते हैं : ''चार।''

फिर पूछते हैं : ''पाँचवाँ कहाँ गया ?''

वे कहते हैं : ''वह तो स्वर्ग चला गया है।''

ये प्रश्नोत्तर किये जाते हैं ताकि वह मृत जीव सूक्ष्म शरीर से यदि उनके इर्द-गिर्द भटकता हो तो सचमुच में स्वर्ग की यात्रा पर चला जाये। इस प्रकार सनातन धर्म में जीवात्मा की उन्नति के लिए कई प्रकार की व्यवस्थाएँ की गई हैं।

यात्रा में चलते-चलते कई रात्रियाँ नींद भी करनी पड़ती है तो कई रात्रियाँ चलना भी पड़ता है। ऐसे ही मृत्यु भी एक यात्रा है। जितनी बार जन्म होता है, उतनी ही बार आराम करने के लिये मृत्यु भी होती है। अगर मृत्युरूपी नींद नहीं होती तो हर जन्म के 'मेरे-तेरे' के संस्कार, लेन-देन के संस्कार मनुष्य को पागल कर देते। संसार एक पागलखाना हो जाता।

अगर माली बगीचे में काट-छाँट नहीं करे तो बगीचा जंगल में बदल जाये। ऐसे ही ईश्वररूपी माली अगर इस संसाररूपी बगीचे में मृत्यु के बहाने काट-छाँट नहीं करे तो यह संसार भयानक जंगल जैसा हो जाये। इसलिए मृत्यु भी बहुत जरूरी है। जैसे, आदमी तेज गर्मी के कारण पसीने से तरबतर हो गया हो और शीतल जल में डुबकी लगाये तो तरोताजा होकर बाहर निकलता है, ऐसे ही मृत्युरूपी महा निद्रा में गोता मारकर जीव पुरानी झंझटों, तनावों आदि को भूल जाता है, तरोताजा हो जाता है और नये सिरे से अपनी जीवन-यात्रा का आरंभ करता है।

मृत्यु एक ईश्वरीय वरदान है, फिर भी यदि कोई जान-बूझकर आत्महत्या करता है तो यह महापाप है। परमात्मा ने हमें यह अमूल्य मानव-चोला दिया है तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम इसे साफ-सुथरा रखें, इसे स्वस्थ-तंदुरुस्त रखें। ऐसा नहीं कि मृत्यु जरूरी है तो अनाप-शनाप खाकर मौत को आमंत्रण दें। यद्यपि कपड़ा मैला होता है, गलता है, फटता है लेकिन उसे जान-बूझकर फाड़ देना तो बेवकूफी है। ऐसे ही शरीर बूढ़ा होता है, बीमार होता है, मरता है- यह प्रकृति की व्यवस्था है लेकिन इसे जान-बूझकर मौत के मुँह में ढकेलना ठीक नहीं।

जो लोग मूर्च्छा में मरते हैं उनका मरना जारी रहता है। जिन्होंने फकीरों की कृपा प्राप्त कर ली है वे सजाग हो जाते हैं। वे मृत्यु को भी देख लेते हैं। जो मृत्यु को भी होश के साथ देख लेते हैं वे अमर हो जाते हैं।

पूर्णता के शिखर पर पहुँचने के लिए जन्म-मृत्यु मानों सीढ़ियों के समान हैं। दिन जितना प्रिय है, रात भी उतनी ही प्यारी है। जीवन जितना प्रिय है, विवेकीजनों को मृत्यु का सिलसिला भी उतना ही प्यारा है। वे इससे दुःखी नहीं होते हैं। जिसका विवेक मरा हुआ है वह तो जीते-जी मरा हुआ है, मगर जिसका विवेक जाग्रत है वह मृत्यु के समय भी नहीं मरता वरन् अमर हो जाता है।

जीवन जीना तो कला है ही, मरना भी एक कला है। मनुष्य को चाहिए कि मौत आ जाये तो वह रोए नहीं, फिक्र न करे वरन् उस समय सावधान हो जाये। यदि कोई मृत्यु के करीब हो तो उसके

पास अमरता भरे उच्चारण करो कि :

''तुम्हारी मौत नहीं हो रही है... मौत हो रही है मरनेवाले शरीर की। तुम शरीरी हो, शरीर नहीं हो। तुम कार के चालक हो, कार नहीं हो। तुम देह नहीं, वरन् देह को चलानेवाले विदेही आत्मा हो।''

मृत्यु के बाद कहो कि :

''यह शरीर जो मरा पड़ा है वह तुम नहीं हो। तुम तो शरीर की मौत के बाद भी वातावरण में विद्यमान हो। तुम हमें देख रहे हो किन्तु हम तुम्हें नहीं देख पा रहे हैं। तुम्हारी सूक्ष्म इन्द्रियाँ जगी हैं, हमारी स्थूल इन्द्रियाँ हैं इसलिए तुम हमें देख सकते हो, हम तुम्हें नहीं देख सकते। अब हम तुम्हें यह प्रेरणा देते हैं कि हाड़-मांस का ऐसा शरीर तुमने पहले भी कई बार पाया और कई बार छोड़ा। अब एक बार और छोड़ दिया। अब तो तुम ऐसी यात्रा करो कि तुम्हें बार-बार शरीर में न आना पड़े। अब तो तुम अपनी आत्मा को पहचानकर परमात्मा से मुलाकात करो और मुक्त हो जाओ... ॐ... ॐ... ॐ... तुम चैतन्यस्वरूप हो... तुम साक्षीस्वरूप हो... तुम भगवान के सनातन अंश हो... तुम अजन्मा आत्मा हो।''

यदि आप मृतात्मा को ऐसी प्रेरणा देते हैं तो उसका कल्याण तो उसी क्षण हो जायेगा और आपके कुटुम्ब में भी सुख-शांति छा जायेगी। यही तो मंगल मृत्यु है। ऐसी मृत्यु का स्वागत करके अमर हो जाओ। आखिर कब तक रोते रहोगे ? कब तक परेशान होते रहोगे ?

...और वास्तव में देखा जाये तो आपकी मृत्यु कभी होती ही नहीं है, मरने का कोई उपाय ही नहीं है। वैज्ञानिक कहते हैं कि आदमी जैसा चिंतन करता है, वैसा ही हो जाता है। यदि कोई सौ बार झूठी कल्पना भी करे तो वैसी कल्पना सच में भी घट सकती है लेकिन मरने की आप लाख बार चेष्टा करो फिर भी नहीं मरते क्योंकि आप एक ऐसा सत्य हो कि वहाँ मृत्यु पहुँच नहीं सकती। यदि मृत्यु आपके आत्मस्वरूप में आये तो वह भी अमर हो जाये।

कोई कह सकता है कि : 'महाराज ! सारी दुनिया मर रही है। समय पाकर हम भी तो मर जायेंगे !'

परन्तु भैया ! आपने अपनी मृत्यु कभी देखी ही नहीं है। यदि आपने अपनी मृत्यु देखी होती तो हजार बार आपका शरीर मरा, उसके साथ आप भी मर जाते। किन्तु ऐसा नहीं होता। दूसरे के शरीर को छूटते हुए देखकर हम कह देते हैं कि हमने मृत्यु देखी है और हम भी मरेंगे। मृत्यु की यह मान्यता हम बना लेते हैं लेकिन जिस आदमी का शव पड़ा होता है वह भी सचमुच मरता नहीं है बल्कि गहरा बेहोश हो जाता है। उसका सूक्ष्म शरीर निकल जाता है और उसकी आगे की यात्रा होने लगती है - मुक्ति की अथवा लोक-लोकान्तरों की यात्रा, कर्म एवं वासनानुसार ऊँच-नीच योनियों में अथवा भगवद्धाम में। जैसे उसके कर्म, भाव, इच्छा की प्रधानता तैसी उसकी यात्रा। अगर कर्म निष्काम हैं, ध्यान-भजन करके भाव ऊँचे कर लिये हैं और तत्त्वज्ञान सुनकर वासनाओं को बाधित कर दिया है, तो फिर उस आत्मारामी जीवन्मुक्त को किसी शरीर में, लोक-लोकान्तर में अथवा भगवद्धाम में जाना नहीं पड़ता। अखिल ब्रह्मांड में सूक्ष्म शरीर सूक्ष्म तत्त्वों में विलीन हो जाता है और स्वयं व्याप जाता है, परमेश्वर-स्वभाव में एकाकार हो जाता है।

यदि आप सब दुःखों से छूटना चाहते हो, यदि आप परम ओज को प्राप्त करना चाहते हो तो इच्छाओं के गुलाम मत बनो, इच्छाओं के पीछे मत भागो, वरन् इच्छाओं के भी द्रष्टा हो जाओ।

चंदा को चाँदनी, सूरज को तेज, जल को रस, पृथ्वी को गन्ध, हवाओं को स्पर्श की सत्ता जिस परम चैतन्य से मिलती है, उस आत्मब्रह्म में वह आत्मवेत्ता, आत्म-साक्षात्कारी महापुरुष एक हो जाता है। जिसके ध्यान, आनंद और सामर्थ्य से

ब्रह्मा, विष्णु, महेश और अन्य देव समर्थ हैं वह परम समर्थ तत्त्व सच्चिदानंदस्वरूप है। जैसे बिन्दु सिन्धु में मिलकर सिन्धु हो जाता है, जैसे घटाकाश महाकाश में मिलकर महाकाश हो जाता है वैसे ही वह जीव ब्रह्म में मिलकर ब्रह्म हो जाता है। वासना और कर्म के वशीभूत होकर निगुरे लोग, शास्त्र-विरुद्ध रास्ते पर चलनेवाले लोग नरक और ऊँच-नीच योनियों में जाते हैं जबकि भक्त एवं गुरुमुख लोग यक्ष, गन्धर्व, देव आदि योनियों एवं स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होते हैं। दृढ़ भगवद्भक्त भगवद्धाम में जा पहुँचते हैं और उनकी जैसी इच्छा एवं कर्मानुकूलता होती है, समय पाकर फिर वैसी यात्रा होती है। जीव का यह सिलसिला तब तक चलता रहता है जब तक जीव अपने ब्रह्मस्वरूप को नहीं जान लेता। इस विषय को बार-बार पढ़ो, समझो और सोचो तथा पूर्णता को पाने का पूर्ण पुरुषार्थ करो। पूर्णता पाना कठिन नहीं, पर जिन्हें कठिन नहीं लगता उनमें श्रद्धा-विश्वास बने रहना कठिन है। माता देवहूति ने श्रद्धा-विश्वास से जहाँ आत्मसिद्धि पायी, वह स्थान आज गुजरात राज्य में सिद्धपुर के नाम से विख्यात है। कार्तिक क्षेत्र का बिन्दु सरोवर अभी भी माता देवहूति की श्रद्धा-विश्वास की सुवास फैला रहा है। माता देवहूति ने अपने आत्म-साक्षात्कारी, आत्मारामी पुत्र कपिलदेव में श्रद्धा-विश्वास करके ऊँची स्थिति पायी, आत्मसिद्धि पायी।

जैसे, जब शल्यक्रिया की जाती है तब 'क्लोरोफार्म' आदि सुँघाकर मरीज को बेहोश कर दिया जाता है और उसकी किडनी आदि बदल दी जाती है। ऐसे ही प्रकृति बड़ी-से-बड़ी शल्यक्रिया करती है और पूरा शरीर ही बदल देती है। मनुष्य के कर्मानुसार उसे घोड़ा, गधा या चूहा आदि किसी भी शरीर में बदल देती है। इसीलिए आदमी एक मुहूर्त के लिए बेहोश हो जाता है, उसे मूर्च्छा आ जाती है लेकिन उसकी मृत्यु नहीं होती।

जो लोग मूर्च्छा में मरते हैं उनका मरना जारी रहता है और वे अपने को मरणधर्मा मानते हैं लेकिन जिन्होंने फकीरों की कृपा प्राप्त कर ली है, जो फकीरों के श्रीचरणों तक पहुँच चुके हैं वे सजाग हो जाते हैं। वे मृत्यु को भी उसी तरह देख लेते हैं जैसे मनुष्य अपने शरीर या शरीर के दर्दकारक अंग को देख पाता है। उसी प्रकार वे मृत्यु को भी शरीर पर घटते हुए देख लेते हैं। जो मृत्यु को भी होश के साथ देख लेते हैं वे अमर हो जाते हैं और जो बेहोश हो जाते हैं वे मरते ही रहते हैं।

आत्म-साक्षात्कार का अर्थ है कि होश से जियें, सजग होकर जियें। जो होश से जी सकता है वह होश से मर भी सकता है। उसका मरना भी मरना नहीं होता वरन् वह अमर हो जाता है, लेकिन जो बेहोशी में जीता है, वह मरता रहता है।

वास्तव में देखा जाये तो आपकी मृत्यु कभी होती ही नहीं। मरने की आप लाख बार चेष्टा करो फिर भी नहीं मरते क्योंकि आप एक ऐसा सत्य हो कि वहाँ मृत्यु पहुँच नहीं सकती।

बेहोशी क्या है ? जैसा अहं का वेग आये, वैसा ही करने लगे। मन में जैसी धारणा बनी या बुद्धि ने जैसा निर्णय दिया वैसा ही काम करने लगे, यह बेहोशी है। होश क्या है ? धारणा, ध्यान, समाधि, प्राणायाम, आत्मविचार आदि करते हुए अपनी असलियत को जान लेना, अपने अहं का विसर्जन कर देना, यह होश है। शाह लतीफ कहते हैं कि :

जे भाई जोगी थियां, तमा छद् तमाम।
सबूर जे शमशेर सां, कर कीन्हे खे कतलाम ॥

अगर आपको होश से मरना है तो योगी बनें और योगी होना है तो जो तमन्नाएँ स्फुरती हैं उन्हें हटाते जाओ। जो-जो इच्छाएँ उठती हैं उन्हें हटाते जाओ। तमन्नाएँ छोड़कर सब्र करो तो यह संभव है कि आप विराट से मिल सकते हो, आप विराट में विसर्जित हो सकते हो।

गोला जे गोलन्ह जा, तिनजो थिऊ गुलाम।
नागा तुहिंजो नाव, लिख जे लाहू तिन में॥

अर्थात् 'सच्चे संतों के दासों के दास बन जाओ।'

यदि आप सब दुःखों से छूटना चाहते हो, यदि आप परम ओज को प्राप्त करना चाहते हो तो इच्छाओं के गुलाम मत बनो, इच्छाओं के पीछे मत भागो, वरन् इच्छाओं के भी द्रष्टा हो जाओ।

अनेक इच्छाएँ उठती रहती हैं। उनमें पचासों इच्छाएँ तो व्यर्थ की होती हैं, थोड़ी ही धर्म के अनुकूल होती हैं। जो इच्छाएँ धर्म के अनुकूल हों एवं आपकी उन्नति में सहायक हों उन्हें सहयोग दो, उन्हें पूरी करने में शक्ति और समय लगाओ लेकिन जो इच्छाएँ आपकी उन्नति एवं धर्म के खिलाफ हों उन इच्छाओं को उठते ही हटा दो।

जो इच्छाओं-वासनाओं के पीछे नहीं भागता, वरन् उनका द्रष्टा हो जाता है वह असंगता का शस्त्र लेकर दृढ़ता से इच्छाओं का छेदन कर डालता है और ऐसी जगह पर पहुँच जाता है, जहाँ से फिर उसे जन्म-मरण के चक्र में नहीं आना पड़ता। उसकी मृत्यु भी अमरता में परिणत हो जाती है।

*

जैसे सतयुग में कपिल भगवान की माँ देवहूति ने कर दिखाया उसी इतिहास का आज करीब ९ लाख वर्ष बाद पुनः संतमाता मातुश्री महँगीबा के रूप में भारत भूमि पर पुनरावर्तन हुआ। परमात्म-प्राप्त पुत्र में इतनी श्रद्धाबुद्धि की कि स्वयं भी परमात्म-प्राप्ति कर दिखाई। पुत्र में प्रभुदृष्टि, गुरुदृष्टि रखनेवाली इन माताओं को सौ-सौ, हजार-हजार, लाख-लाख, करोड़-करोड़ ही नहीं, अनन्त-अनन्त प्रणाम!

- संपादक

'ब्रह्मवैवर्तपुराण' के गणेशखण्ड के ४०वें अध्याय में आया है :

जनको जन्मदातृत्वात् पालनाच्च पिता स्मृतः।
गरीयान् जन्मदातुश्च योऽन्नदाता पिता मुने॥
तयोः शतगुणे माता पूज्या मान्या च वन्दिता।
गर्भधारणपोषाभ्यां सा च ताभ्यां गरीयसी॥

'जन्मदाता और पालनकर्त्ता होने के कारण सब पूज्यों में पूज्यतम जनक और पिता कहलाता है। जन्मदाता से भी अन्नदाता पिता श्रेष्ठ है। इनसे भी सौगुनी श्रेष्ठ और वन्दनीया माता है, क्योंकि वह गर्भधारण तथा पोषण करती है।'

इसलिए जननी एवं जन्मभूमि को स्वर्ग से भी श्रेष्ठ बताते हुए कहा गया है कि :

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

प्रगट या अप्रगट रूप से प्रत्येक सफल महापुरुष के पीछे किसी-न-किसी महान् नारी का हाथ अवश्य रहता है, यह सभी जानते हैं।

जिस नारी ने बाल्यकाल से ही पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू में आध्यात्मिकता का सिंचन किया, उन्हें ध्यान-भजन करना सिखाया, उनमें ईश्वर के प्रति दृढ़ विश्वास जगाया वे महान् नारी थीं परम पूजनीया श्री माँ महँगीबा।

अविभाज्य भारत (वर्त्तमान पाकिस्तान) के टण्डेआदम शहर से २ मील की दूरी पर स्थित

मीरहसनमरी नामक स्थान पर श्री देवड़ामलजी के सुपुत्र श्री प्रेमचंदजी के यहाँ लगभग सन् १९०८ में श्री माँ महँगीबा का जन्म हुआ था।

बाल्यकाल से ही इनके जीवन में सरलता एवं प्रत्येक परिस्थिति में समता के दर्शन होते थे। परमात्मा के प्रति इनकी सहज भक्ति-निष्ठा थी एवं ये कई व्रत एवं उपवास भी किया करती थीं। ऐसे सरल-सहज एवं निर्दोष लोगों के यहाँ ही तो महान् आत्माएँ अवतरित हुआ करती हैं ! 'श्रीरामचरितमानस' में भी आता है कि :

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

बेराणी गाँव के श्री सिरूमलानीजी के तीन सुपुत्र थे। उन्हीं में से श्री थाऊमलजी के लिये उनके कुलगुरु श्री परशुरामजी ने जिस कन्या का चयन किया, वे ये ही माँ महँगीबा थीं।

सिरूमलानीजी अत्यंत साधन-संपन्न थे जबकि प्रेमचंदजी की परिस्थिति अत्यंत साधारण थी। अतः माँ महँगीबा का विवाह इस परिवार में न करने के लिये कई लोगों ने प्रेमचंदजी को समझाया। पूज्यश्री बताते हैं कि :

''हमारे पिताजी बुद्धि में बड़े वरिष्ठ थे लेकिन उम्र में अपने दो भाइयों से छोटे थे। यह तो परंपरा है कि छोटा भाई बेटे के समान होता है, उसे बड़ों का आदर करना चाहिए लेकिन... उन दो बड़े भाइयों का अर्थात् हमारे दो बड़े काकाओं का एवं हमारी दो काकियों का स्वभाव बड़ा कर्कश था। अतः मेरे पिताजी की शादी नहीं होती थी। परिवार धनी तो था लेकिन लड़के (थाऊमलजी) की भाभियाँ ऐसी थीं कि कोई अपनी कन्या उसे नहीं देना चाहता था। अपनी लड़की देकर उसे जान-बूझकर दुःख में क्यों डालना ?

अतः यह काम उनके कुलगुरु को करना पड़ा। उन्होंने ही प्रेमचंदजी से कहा कि :

''अपनी कन्या का विवाह यहाँ करो।'' प्रेमचंदजी गरीब साधक शिष्य थे। वे बोले :

''जैसी आपकी मर्जी !''

उन्होंने सिरूमलानीजी के छोटे पुत्र थाऊमलजी से अपनी कन्या महँगीबा की सगाई करा दी। जब इस बात का पता दोनों पक्षों के गाँववालों को चला तो उन्हें ऐसा आश्चर्य हुआ मानों, कोई वज्रपात हो गया हो !

सिरूमलानीजी को लोग बहकाने लगे कि :

''तुमने क्या ऐसे गरीब घर में रिश्ता तय किया ? प्रेमचंदजी के पास है ही क्या ? ...और तुम कितने साधन-संपन्न हो !''

उधर प्रेमचंदजी से भी लोग कहने लगे कि :

''तुम्हारे घर में यदि पावभर आटा नहीं है तो लड़की का गला घोटकर, उसे बोरे में भरकर तालाब में डाल आओ। इससे तो उसकी एक बार ही मृत्यु होगी लेकिन उस घर में तो वह रोज मार खायेगी। रिबा-रिबाकर लड़की को मारने के लिये क्यों भेजते हो ?''

दोनों संबंधों में कोई तालमेल नहीं। एक ओर एकदम गाय जैसी कन्या तो दूसरी ओर शेरनी जैसी भाभियाँ। आखिर श्री परशुरामजी को अपने विशेषाधिकार का उपयोग करना पड़ा कि : ''अगर यह रिश्ता पक्का नहीं हुआ तो मैं अन्न-जल का त्याग करूँगा।''

गुरुजी को तकलीफ न हो, इसलिए कन्यादान करनेवालों ने कन्यादान कर दिया और माँ महँगीबा दुलहन बनकर बेराणी गाँव में आ गयीं।

समय बीतने पर संतानें हुईं। एक तो उनको पालना और दूसरे, घर के पूरे काम करना एवं ऊपर से रात्रि में जब मेरे पिता घर में आते, तब दोनों 'देवियाँ' ऐसे-ऐसे आरोप प्रस्तुत करें कि मेरे पिताजी माँ की पिटाई कर देते ! माँ दिनभर घर का काम करतीं, जेठानियों के ताने सुनतीं एवं रात्रि को मार खातीं, फिर भी उनके साथ निभाती रहीं। भाभियाँ उनके साथ भले दासी की भी दासी-सा व्यवहार करतीं लेकिन माँ कभी उनका कोई प्रतिकार न करतीं।

मानसिक यंत्रणा की तो हद थी! माँ ने आपबीती बताते हुए कहा था कि : ''मुझे इतना तनाव था कि एक बार मैं स्नानघर में थी और वे आ गये। मुझे बुलाया : 'कहाँ गई ?' मैं तो इतनी भयभीत हुई कि उसी स्नानघर में गिर पड़ी!''

इतना मानसिक तनाव था ! काफी वर्षों के बाद थाऊमलजी अपने परिवार से अलग हुए तब माँ महँगीबा को छाछ आदि बाँटने की छूटछाट मिल पायी थी।''

सहनशीलता तो मानों, उनमें कूट-कूटकर भरी थी। शायद उनके जीवन का कसौटीकाल ही उनके उज्ज्वल भविष्य की नींव बना। श्री माँ महँगीबा का स्वभाव अत्यंत नम्र, दयालु, सरल, सेवाभावी एवं ईश्वरभक्ति से परिपूर्ण था। वे प्रतिदिन नियम से पक्षियों को दाना देती थीं। नित्य-नियम से ईश्वर की आराधना-अर्चना करती थीं। वे अपने घर आये हुए अतिथियों, साधु-संतों व घर की गायों की सेवा तथा घर के कई काम-काज स्वयं ही अपने हाथों से करती थीं। माता यशोदा की तरह वे स्वयं ही दूध-दही बिलोकर गाँव के लोगों में केवल छाछ ही नहीं, छाछ के साथ मक्खन भी प्रेमपूर्वक बाँटती थीं। उन्होंने अपने नौकरों-चाकरों तक से कह रखा था कि : 'यदि किसी कारणवशात् मैं यहाँ न रहूँ तो तुम लोग कभी-भी किसीको भी द्वार से खाली हाथ न लौटने देना।'

ऐसी थी उनकी परोपकारिता!

उनकी सेवा की भावना इतनी प्रबल थी कि जिस दिन हमारे सद्गुरुदेव का प्रागट्य होनेवाला था उस दिन भी उन्होंने भगवान से प्रार्थना की थी। पूज्य माँ महँगीबा के ही शब्दों में :

''सुबह से ही प्रसूति की पीड़ा हो रही थी। मैंने भगवान से प्रार्थना की कि : 'छाछ और मक्खन बाँटने के बाद ही कुछ हो।' भगवान ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली और बारह बजे तुम्हारे साँई आये।''

पूज्यश्री आगे बताते हैं कि :

''सन् १९४७ में देश का विभाजन हुआ और मेरे पिता को नगरसेठ का संपूर्ण वैभव छोड़कर भारत आना पड़ा। यहाँ आकर वे मणिनगर, अमदावाद में थोड़े व्यवस्थित हुए-न-हुए कि अचानक माँ का सुहाग छिन गया। उस वक्त मैं केवल १० वर्ष का था। फिर थोड़े दिन बीते-न-बीते कि बड़े भाई की दोस्ती कुछ मनचले लोगों के साथ हो गयी अतः घर की गाड़ी मुझे ही जैसे-तैसे खींचनी पड़ी। ऐसा करते-कराते जैसे ही सुख के सूर्योदय की तैयारी हुई कि सद्गुरुदेव की प्राप्ति के लिये मैं भी घर छोड़कर चल दिया।''

शादी के बाद ससुरालवालों की टोकाटाकी, विभाजन के समय सारा वैभव छोड़कर भारत आना एवं अचानक थाऊमलजी का देहावसान... माँ महँगीबा पर तो एक के बाद एक वज्राघात हो रहे थे। ये भी प्रकृति को कम लगे तो सबसे प्रिय पुत्र आसुमल का अनिश्चित काल के लिये वियोग!

कसौटी पर कंचन को ही कसा जाता है, लोहे को नहीं। प्रकृति भी मानों, उन्हें भीषण अग्नि में तपा-तपाकर कुन्दन-सा बना रही थी। पूज्यश्री के वियोगकाल में भी जिस नारी ने अपने हृदय पर पत्थर रखकर सात वर्ष की दीर्घ अवधि को तितिक्षापूर्वक व्यतीत किया, उन माँ महँगीबा की उस तपस्या का फल ही आज पूज्यश्री के रूप में फलित हुआ है।

इतिहास में इस घटना का पुनरावर्तन लाखों वर्षों के बाद ही दृष्टिगोचर हुआ है। एक माँ थीं देवहूति, जिन्होंने अपने पुत्र कपिल भगवान से ही आत्मज्ञान पाया एवं दूसरी माँ हुई माँ महँगीबा, जिन्होंने पूज्यश्री को 'गुरु' रूप में स्वीकार कर अपनी आध्यात्मिक यात्रा पूर्ण की।

पूज्यश्री कहते हैं कि : ''कभी-कभी मैं विनोद में अपनी माँ से पूछता कि : 'आपके बाल-बच्चे कहाँ हैं ?'...तो माँ ऐसा नहीं कहतीं कि : 'तुम जो हो !'

मैं तो माँ मानकर उनसे मिलता था लेकिन जबसे मुझमें उनकी गुरुबुद्धि हुई तबसे मैंने फिर

उनके चरण नहीं छुए । लेकिन इस गुरुबुद्धि का फल गुरुतत्त्व जब उन्होंने पाया और शरीर से वे विदा हुईं तब मैंने उनके चरणों पर अपना मत्था टेका । मेरे से भी आगे का काम उन्होंने कर दिखाया । लाखों वर्षों के बाद इतिहास ने मेरे साथ यह मेहरबानी की । नहीं नहीं... इतिहास ने मुझ पर मेहरबानी नहीं की बल्कि इतिहास रचनेवाली मेरी माँ ने मुझ पर मेहरबानी की कि मुझे 'गुरु' के रूप में निहारा । मैं तो उन्हें भुलावे में डालता था लेकिन वे भुलावे में नहीं पड़ीं ।

मुझे इस बात का बड़ा संतोष है कि ऐसी तपस्विनी माता की कोख से यह शरीर पैदा हुआ और इस बात का भी मुझे बड़ा संतोष है कि आखिरी दिनों में मैं उनके ऋण से थोड़ा मुक्त हो पाया ।''

मानवमात्र के हित के लिये पूज्यश्री के द्वारा किये जानेवाले कार्यों को सारा विश्व जानता ही है लेकिन उनकी जन्मदात्री श्री माँ महँगीबा ने समाज के लिये जो किया, उससे समाज लगभग अपरिचित ही रहा क्योंकि माँ महँगीबा ने कभी प्रसिद्धि को महत्त्व नहीं दिया, न ही उन्होंने 'संत की माँ' के रूप में प्रसिद्धि पाने की कभी कोशिश ही की, वरन् वे तो लगी रहीं मूक एवं निष्काम भाव से प्रभुभक्ति एवं जनसेवा में ।

गरीब लोगों में छाछ का मुफ्त वितरण और केवल छाछ का ही नहीं, छाछ के साथ मक्खन का भी वितरण, गरीब परिवार की बेटियों की शादी में गुप्त रूप से वस्त्र आदि की व्यवस्था करना, अत्यंत दरिद्र एवं क्षुधापीड़ितों के लिये अनाज की व्यवस्था करना-करवाना, शीत ऋतु में ऊनी वस्त्र एवं कंबल का वितरण करवाना, यदि कोई अत्यंत असहाय एवं गृहविहीन हो तो उसके लिए मकान आदि की व्यवस्था करना-करवाना, आश्रम में उगायी गयी सब्जी आदि का भी जरूरतमंदों में वितरण करना... ऐसे तो कई सेवाकार्य थे, जिन्हें वे चुपचाप करती रहीं ।

किसीकी आँखों में आँसू तो श्री माँ महँगीबा देख ही नहीं सकती थीं । ऐसों की मदद के लिये तो कई बार वे स्वयं को भी कष्ट में डाल दिया करतीं किन्तु उनके आँसू पोंछे बिना न रहतीं । स्वच्छता, सदाचार, संयम एवं पवित्रता का पाठ केवल उन्होंने आश्रमवासियों को ही पढ़ाया हो- ऐसी बात नहीं है अपितु उनके संपर्क में आनेवाले प्रत्येक मानव को उनके जीवन से ये प्रेरणाएँ सदा मिलती ही रही हैं ।

आज पूजनीया माँ महँगीबा हमारे बीच नहीं हैं । दिनांक : ४ नवम्बर को ब्राह्ममुहूर्त में ५ बजकर ३७ मिनट पर बिना किसी ममता-आसक्ति के, बिना किसी इच्छा-वासना के, बिना किसी औषधि की आवश्यकता के और बिना किसी पीड़ा के उनका चिरनिर्वाण हो गया । माँ महँगीबा का पावन स्थूल शरीर तो अब हमारे बीच नहीं है, मगर मानव-उत्थान की उनकी पवित्र कल्याणकारी भावनाएँ हमारे साथ हैं । नश्वर देह को 'मैं' मानना और शाश्वत् आत्मा को भूलना- यही अज्ञान का मूल है । इसी मूल को उखाड़नेवाले पू. बापूजी का ज्ञान, भक्ति और माताजी का अनुभव हमारे साथ है । उनका सत्य संकल्प, परहितपरायणता का संकल्प हमारे हृदय की गहराई में आदर्श बनकर बैठा है । वात्सल्यमूर्ति एवं मूक निष्काम सेविका माँ महँगीबा एक ऐसी दिव्य ज्योति के समान थीं जिसका प्रकाश चिरकाल तक लाखों-लाखों लोगों के जीवन को प्रकाशित करता रहेगा ।

परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री लीलाशाहजी महाराज की पूर्ण कृपा को प्राप्त कर पूर्णत्व को उपलब्ध हुए पूज्यश्री को लाखों-करोड़ों लोग गुरु के रूप में मानें तो इसमें क्या आश्चर्य है ? लेकिन उनको बाल्यकाल में प्रेमपूर्वक पयःपान करानेवाली, अपनी गोद में प्रेमपूर्वक खिलानेवाली, ऊँगली पकड़कर चलानेवाली, उनमें नैतिकता, सदाचार एवं ईश्वरीय प्रेम जगानेवाली एवं भक्ति-भाव का सिंचन करनेवाली उनकी माँ ही उन्हें यदि 'गुरु' के रूप में स्वीकार करें तो क्या यह महान् आश्चर्य की बात नहीं है ? **(संकलित)**

ऐसी थीं अम्मा

✲ पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू ✲

मेरी माँ का दिव्य गुरुभाव

माँ बालक की प्रथम गुरु होती है। बालक पर उसके लाख-लाख उपकार होते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से मैं उनका पुत्र था फिर भी मेरे प्रति उनकी गुरुनिष्ठा बड़ी निराली थी !

एक बार वे दही खा रही थीं तो मैंने कहा :

''दही आपके लिये ठीक नहीं रहेगा।''

उनके जाने के कुछ समय पूर्व ही उनकी सेविका ने मुझे बताया कि : ''अम्मा ने फिर कभी दही नहीं खाया क्योंकि गुरुजी ने मना किया था।''

इसी प्रकार एक अन्य अवसर पर माँ भुट्टा (मक्का) खा रही थीं। मैंने कहा :

''भुट्टा तो भारी होता है, बुढ़ापे में देर से पचता है। क्यों खाती हो ?''

माँ ने भुट्टे खाना भी छोड़ दिया। फिर दूसरे-तीसरे दिन उन्हें भुट्टा दिया गया तो वे बोलीं :

''नहीं, गुरुजी ने मना किया है। गुरु 'ना' बोलते हैं तो क्यों खायें ?''

माँ को आम बहुत पसंद था किन्तु उनके स्वास्थ्य के अनुकूल न होने के कारण मैंने उसके लिए भी मना किया तो माँ ने उसे भी खाना छोड़ दिया।

माँ का विश्वास बड़ा गजब का था ! एक बार कह दिया और बात पूरी हो गयी। 'अब, 'उसमें विटामिन्स हैं कि नहीं... मेरे लिए हानिकारक है या अच्छा...' उसको कुछ सुनने की जरूरत नहीं है। बापू ने 'ना' बोल दिया तो बात पूरी हो गयी।

श्रद्धा की हद हो गयी ! श्रद्धा इतनी बढ़ गयी, इतनी बढ़ गयी कि उसने विश्वास का रूप धारण कर लिया। श्रद्धा और विश्वास में फर्क है। श्रद्धा, सामनेवाले की महानता को देखकर करनी पड़ती है जबकि विश्वास पैदा होता है। 'श्रीरामचरितमानस' में आता है :

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।

माँ पार्वती श्रद्धा का और भगवान शिव विश्वास का स्वरूप हैं। ये श्रद्धा और विश्वास जिसमें हैं, समझो उसके माता-पिता शिव-पार्वतीस्वरूप हो गये। मेरी माँ में पार्वती का स्वरूप तो था ही, साथ ही शिव का स्वरूप भी था। मैं एक बार जो कह देता, उनके लिये वह पत्थर पर लकीर हो जाता।

पुत्र में दिव्य संस्कार डालनेवाली पुण्यशीला माताएँ तो इस धरा पर कई हो गयीं। रखूनाई देवी ने विनोबा भावे में बाल्यकाल से ही उच्च संस्कार डाले थे। बाल्यकाल से ही शिवाजी में भारतीय संस्कृति की गरिमा एवं अस्मिता की रक्षा के संस्कार डालनेवाली भी उनकी माता जीजाबाई ही थीं लेकिन पुत्र को गुरु मानने का भाव... देवहूति के सिवाय किसी अन्य माता में मैंने आज तक नहीं देखा था।

मेरी माँ पहले तो मुझे पुत्रवत् प्यार करती थीं लेकिन जब से गुरु की नजर बनी, तब से पुत्ररूप से व्यवहार नहीं किया। वे हमेशा कहतीं :

''साँईजी आये हैं... साँईजी का जो खाना बचा है वह मुझे दे दे...'' आदि-आदि।

दो-चार महीने पहले की ही बात है।

माँ ने मुझसे कहा : ''प्रसाद दो।''

हद हो गयी ! ऐसी श्रद्धा ! पुत्र में इस प्रकार की श्रद्धा कोई साधारण बात है ? उनकी श्रद्धा को नमन है, बाबा !

मेरी ये माता शरीर को जन्म देनेवाली माता

तो हैं ही, भक्तिमार्ग की गुरु भी हैं, समता में रहनेवाली और समाज के उत्थान की प्रेरणा देनेवाली माता भी हैं। यही नहीं, इन सबसे बढ़कर इन माता ने एक ऐसी गजब की भूमिका अदा की है कि जिसका उल्लेख इतिहास में कभी-कभार ही दिखाई पड़ता है। सतियों की महिमा हमने पढ़ी, सुनी, सुनाई... अपने पति को परमात्मा माननेवाली देवियों की सूची भी हम दिखा सकते हैं लेकिन पुत्र में गुरुबुद्धि... पुत्र में परमात्मबुद्धि... ऐसी श्रद्धा हमने एक देवहूति माता में देखी, जो कपिल मुनि को अपना गुरु मानकर, आत्म-साक्षात्कार करके तर गयीं और दूसरी ये माता मेरे ध्यान में हैं।

एक बार मैं अचानक बाहर चला गया और जब लौटा तो सेविका ने बताया कि : ''माताजी बात नहीं करती हैं।''

मैंने पूछा : ''क्यों ?''

सेविका : ''वे कहती हैं कि साँई मना कर गये हैं कि किसीसे बात नहीं करना तो क्यों बातचीत करूँ ?''

मेरे निकटवर्ती कहलानेवाले शिष्य भी मेरी आज्ञा पर ऐसा अमल नहीं करते होंगे, जैसा इन देवीस्वरूपा माता ने अमल करके दिखाया है।

माँ की श्रद्धा की कैसी पराकाष्ठा है ! मुझे ऐसी माँ का बेटा होने का व्यावहारिक गर्व है और ब्रह्मज्ञानी गुरु का शिष्य होने का भी गर्व है।

'प्रभु ! मुझे जाने दो...'

मेरी माँ मुझे बड़े आदरभाव से देखा करती थीं। जब उनकी उम्र करीब ८६ वर्ष की थी तब उनका शरीर काफी बीमार हो गया था। डाक्टरों ने कहा : ''लीवर और किडनी दोनों खराब हैं। एक दिन से ज्यादा नहीं जी सकेंगी।''

२३ घण्टे बीत गये। मैंने अपने वैद्य को भेजा तो वैद्य भी उतरा हुआ मुँह लेकर मेरे पास आया और बोला : ''बापू ! एक घण्टे से ज्यादा नहीं निकाल पायेंगी माँ।''

मैंने कहा : ''भाई ! तू कुछ तो कर ! मेरा वैद्य है... इतने चिकित्सालय देखता है...''

वैद्य : ''बापू ! अब कुछ नहीं हो सकेगा।''

माँ कराह रही थीं। करवट भी नहीं ले पा रही थीं। जब लीवर और किडनी दोनों निष्क्रिय हों तो क्या करेंगे आपके इंजेक्शन और दवाएँ ? मैं गया माँ के पास तो माँ ने इस ढंग से हाथ जोड़े मानों, जाने की आज्ञा माँग रही हों। फिर धीरे-से बोलीं :

''प्रभु ! मुझे जाने दो।''

ऐसा नहीं कि, 'बेटा मुझे जाने दो...' नहीं नहीं। माँ ने कहा : ''भगवान ! मुझे जाने दो... प्रभु ! मुझे जाने दो।''

मैंने उनके प्रभु-भाव और भगवान-भाव का जी भरकर फायदा उठाया और कहा :

''मैं नहीं जाने देता। तुम कैसे जाती हो, मैं देखता हूँ।''

माँ बोली : ''प्रभु ! पर मैं करूँ क्या ?''

मैंने कहा : ''मैं स्वास्थ्य का मंत्र देता हूँ।''

उर्वर भूमि पर उलटा-सीधा बीज पड़े तो भी उगता है। माँ का हृदय ऐसा ही था। मैंने उनको मंत्र दिया और उन्होंने रटना चालू किया। एक घण्टे में जो मरने की नौबत देख रही थीं, अब एक घण्टे के बाद उनके स्वास्थ्य में सुधार शुरू हो गया। फिर एक महीना... दो महीने... पाँच महीने... पंद्रह महीने... पच्चीस महीने... चालीस महीने... ऐसा करते-करते साठ से भी ज्यादा महीने हो गये। वे ८६ वर्ष की थीं, अभी ९२ वर्ष पार कर गयीं। जब आज्ञा मिली... रोकने का संकल्प लगाया तो उसे हटाने का कर्त्तव्य भी मेरा था। अतः आज्ञा मिलने पर ही उन्होंने शरीर छोड़ा। गुरुआज्ञा-पालन का कैसा दृढ़ भाव !

इच्छाओं से परे : माँ महँगीबा

कुछ सप्ताह पूर्व ही मैंने माँ से कहा :

''आपको सोने में तौलेंगे।'' ...लेकिन उनके चेहरे पर हर्ष का कोई चिह्न नजर नहीं आया।

मैंने पुनः हिला-हिलाकर कहा :

''आपको सोने में तौलेंगे, सोने में।''

माँ : ''यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता है।''

मैंने कहा : ''तुला हुआ सोना महिला आश्रम ट्रस्ट में जमा करेंगे। फिर महिलाओं और गरीबों की सेवा में लगेगा।''

माँ : ''हाँ... सेवा में भले लगे, लेकिन मेरे को तौलना-वौलना नहीं है।''

सुवर्ण महोत्सव के पहले ही माँ की यात्रा पूरी हो गयी। सुवर्ण महोत्सव के निमित्त जो भी करना है, वह तो करेंगे ही...

मैंने कहा : ''आपका मंदिर बनायेंगे।''

माँ : ''ये सब कुछ नहीं करना है।''

मैं : ''आपकी क्या इच्छा है ? हरिद्वार जायें ?''

माँ : ''वहाँ तो नहाकर आये।''

मैं : ''क्या खाना है ? यह खाना है ?''

माँ : ''मुझे अच्छा नहीं लगता है।''

कई बार विनोद का समय मिलता तो पूछते। कई ख्वाहिश पूछ-पूछकर थक गये लेकिन उनकी कोई ख्वाहिश हमको दिखी नहीं। अगर उनकी कोई भी इच्छा होती तो उनके इच्छित पदार्थ को लाने की सुविधा मेरे पास थी। किसी व्यक्ति से, पुत्र से, पुत्री से, कुटुम्बी से मिलने की इच्छा होती तो उनसे भी मिला देते। कहीं जाने की इच्छा होती तो वहाँ ले जाते लेकिन उनकी कोई इच्छा ही नहीं थी।

न उनमें कुछ खाने की इच्छा थी, न कहीं जाने की, न किसीसे मिलने की इच्छा थी, न ही यश-मान की... तभी तो उन्हें इतना मान मिल रहा है। जहाँ मान-अपमान सब स्वप्न है, उसमें उनकी स्थिति हुई, इसीलिये ऐसा हो रहा है।

इस प्रसंग से करोड़ों-करोड़ों लोगों को, समग्र मानव जाति को प्रेरणा जरूर मिलेगी।

जीवन में कभी फरियाद नहीं...

मैंने अपनी माँ को कभी कोई फरियाद करते हुए नहीं देखा कि : 'मुझे इसने दुःख दिया... उसने कष्ट दिया... यह ऐसा है... वह वैसा है...'

जब हम घर पर थे, तब बड़ा भाई जाकर मेरे बारे में माँ से फरियाद करता कि : ''वह तो दुकान पर आता ही नहीं है।''

माँ मुझसे कहतीं : ''अब क्या करूँ ? वह तो ऐसा बोलता है।''

जब माँ आश्रम में रहने लगीं तब भी आश्रम की बच्चियों की कभी फरियाद नहीं... आश्रम के बच्चों की कभी फरियाद नहीं। कैसा मूक जीवन ! ऐसी आत्माएँ धरती पर कभी-कभार ही आती हैं इसीलिये यह वसुंधरा टिकी हुई है। मुझे इस बात का बड़ा संतोष है कि ऐसी तपस्विनी माता की कोख से यह शरीर पैदा हुआ है।

उनके चित्त की निर्मलता से मुझे तो बड़ी मदद मिली, आप लोगों को भी बड़ा अच्छा लगता होगा। मुझे तो लगता है कि जो भी महिलाएँ माँ के निकट आयी होंगी, उनके हृदय में माता के प्रति अहोभाव जग ही गया होगा।

'मैं तो संत की माँ हूँ... ये लोग साधारण हैं...' ऐसा भाव कभी किसीने उनमें नहीं देखा। अथवा 'हम बड़े हैं... पूजने योग्य हैं... लोग हमें प्रणाम करें... मान दें...' ऐसा किसीने उनमें नहीं देखा अपितु यह जरूर देखा है कि वे किसीको प्रणाम नहीं करने देती थीं।

ऐसी माँ के संपर्क में हम आये हैं तो हमें भी ऐसा चित्त बनाना चाहिए कि हम भी सुख-दुःख में सम रहें। अपनी आवश्यकताएँ कम करें। हृदय में भेदभाव न रहे। सबके मंगल का भाव रखें।

बीमारों के प्रति माँ की करुणा

मुझे इस बात का पता अभी तक नहीं था, अभी रसोइये ने और दूसरे लोगों ने बताया कि जब भी कोई आश्रमवासी बीमार पड़ जाता तो माँ उसके पास स्वयं चली जाती थीं। संचालक रामभाई ने बताया कि :

''एक बार मैं बहुत बीमार पड़ गया तो माँ आईं और मेरे ऊपर से कुछ उतारा करके उन्होंने उसे

अग्नि में फेंका। उन्होंने ऐसा तीन दिन तक किया और मैं ठीक हो गया।''

दूसरे लड़कों ने भी बताया कि : ''हमको भी कभी कुछ होता और माँ को पता चलता तो वे देखने आ ही जाती थीं।''

एक बार आश्रम में किसी महिला को बुखार हो आया तो माँ स्वयं उसका सिर दबाने बैठ गयीं।

महिला आश्रम में भी कोई साधिका बीमार पड़ती तो माँ उसका ध्यान रखतीं। यदि वह ऊपर के कमरे में होती तो माँ कहतीं : ''बेचारी को नीचे का कमरा दो, बीमारी में ऊपर-नीचे आना-जाना नहीं कर पायेगी।''

ऐसा था उनका परदुःखकातर हृदय!

'कोई कार्य घृणित नहीं है...'

एक बार एक लड़के का कच्छा-लँगोट गंदा देखा तो शिवलाल ने उसको फटकार लगाई। लेकिन माँ तो ऐसे कई कच्छे-लँगोट चुपचाप धोकर बच्चों के कमरे के किनारे रख देती थीं। कई गंदे-मैले कच्छे जिन्हें खुद भी धोने से घृणा होती हो ऐसे कपड़ों को माँ ने धोया एवं बच्चों के कमरों के किनारे चुपचाप रख दिया।

कैसा उदार हृदय रहा होगा माँ का! कैसा दिव्य वात्सल्यभाव रहा होगा!! अंतःकरण में व्यावहारिक वेदांत की धारा कैसी रही होगी!!! सभी के प्रति कैसी दिव्य संतान-भावना रही होगी!!!!

सफाई के जिस कार्य को लोग घृणित समझते हैं उस कार्य को करने में भी माँ को घृणा नहीं। कितनी उनकी महानता! सचमुच, वे शबरी माँ ही थीं।

ऐसी माँ के लिये शोक किस बात का?

जिस दिन मेरे सद्गुरुदेव का महानिर्वाण हुआ, उसी दिन मेरी माता का भी महानिर्वाण हुआ। ४ नवम्बर, १९९९ तदनुसार एकादशी का दिन, कार्तिक का महीना, गुजरात के मुताबिक आश्विन, संवत २०५५ एवं गुरुवार। न इंजेक्शन भुकवाये, न ऑक्सीजन पर रहीं, न अस्पताल में भर्ती हुईं वरन् आश्रम की एकांत जगह पर, ब्राह्ममुहूर्त में ५ बजकर ३७ मिनट पर बिना किसी ममता-आसक्ति के उनका नश्वर देह छूटा। पक्षी पिंजरा छोड़कर आजाद हुआ, ब्रह्म हुआ तो शोक किस बात का?

व्यवहारकाल में लोग बोलते हैं कि : 'बापूजी! यह शोक की वेला है। हम सब आपके साथ हैं...' ठीक है, यह व्यवहार की भाषा है लेकिन सच्ची बात तो यह है कि मुझे शोक हुआ ही नहीं है। मुझमें तो बड़ी शांति, बड़ी समता है क्योंकि माँ अपना काम बनाकर गयी हैं।

संत मरे क्या रोइये, वे जायें अपने घर...

माँ ने आत्मज्ञान के उजाले में देह का त्याग किया है। शरीर से स्वयं को पृथक् मानने की उनकी रुचि थी, वासना को मिटाने की कुंजी उनके पास थी, यश और मान से वे कोसों दूर थीं। 'ॐ...ॐ...' का चिंतन-गुँजन करके, अंतर्मन में यात्रा करके दो दिन के बाद वे विदा हुईं।

जैसे कपिल मुनि की माँ देवहूति आत्मारामी हुईं ऐसे ही माँ महँगीबा आत्मारामी होकर, नश्वर चोले को छोड़कर, शाश्वत् सत्ता में लीन हुईं अथवा संकल्प करके कहीं भी प्रगट हो सकें, ऐसी दशा में पहुँचीं। ऐसी माँ के लिए शोक किस बात का?

जिनके जीवन में कभी किसीके लिये फरियाद नहीं रही, ऐसी आत्माएँ धरती पर कभी-कभार ही आती हैं। इसीलिये यह वसुंधरा टिकी हुई है।

मुझे इस बात का बड़ा संतोष है कि ऐसी तपस्विनी माँ की कोख से यह शरीर पैदा हुआ है और इस बात का भी संतोष है कि आखिरी दिनों में मैं उनके ऋण से थोड़ा मुक्त हो पाया। इधर-उधर के कई कार्यक्रम होते रहते थे लेकिन हम ऐसे ही कार्यक्रम बनाते कि माँ याद करें और हम पहुँच जायें।

मेरे गुरुजी जब इस संसार से विदा हुए तो उन्होंने मेरी ही गोद में महाप्रयाण किया और मेरी माँ के महानिर्वाण के समय भी भगवान ने मुझे यह अवसर दिया- इस बात का मुझे संतोष है।

मंगल मनाना यह तो हमारी संस्कृति में है लेकिन शोक मनाना- यह हमारी संस्कृति में नहीं है। हम श्रीरामचंद्रजी का प्रागट्य दिवस रामनवमी बड़ी धूमधाम से मनाते हैं, श्रीकृष्ण का अवतरण दिवस जन्माष्टमी बड़ी धूमधाम से मनाते हैं लेकिन श्रीकृष्ण और श्रीरामजी जिस दिन विदा हुए, उसे हम शोकदिवस के रूप में नहीं मनाते हैं, हमें पता भी नहीं है।

शोक और मोह- ये आत्मा की स्वाभाविक दशाएँ नहीं हैं। शोक और मोह तो जगत् को सत्य मानने की गलती से होता है। इसीलिये अवतारी महापुरुषों की विदाई का दिन भी हमको याद नहीं है कि किस दिन वे विदा हुए और हम शोक मनायें।

हाँ, किन्हीं-किन्हीं महापुरुष की निर्वाण तिथि जरूर मनाते हैं जैसे, वाल्मीकि निर्वाण तिथि, बुद्ध की निर्वाण तिथि, कबीर, नानक, श्रीरामकृष्ण परमहंस अथवा श्री लीलाशाहजी बापू आदि ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की निर्वाण तिथि मनाते हैं, लेकिन उस तिथि को हम शोक के रूप में नहीं मनाते हैं वरन् उस तिथि को हम मनाते हैं उनके उदार विचारों का प्रचार-प्रसार करने के लिये, उनके मांगलिक कार्यों से सत्प्रेरणा पाने के लिये।

हम शोकदिवस नहीं मनाते हैं क्योंकि सनातन धर्म जानता है कि आपका स्वभाव अजर, अमर, अजन्मा, शाश्वत् और नित्य है और मृत्यु शरीर की होती है। हम भी ऐसी दशा को प्राप्त हों, इस प्रकार के संस्मरणों का आदान-प्रदान निर्वाण तिथि पर करते हैं, महापुरुषों के सेवाकार्यों का स्मरण करते हैं एवं उनके दिव्य जीवन से प्रेरणा पाकर स्वयं भी उन्नत हो सकें- ऐसी उनसे प्रार्थना करते हैं।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ८६ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया दिसम्बर के अंत तक अपना नया पता भिजवा दें।

विश्ववंदनीय संत श्री आसारामजी महाराज ने जिनकी कोख को पावन किया, जिनसे बाल्यकाल में भगवद्भक्ति के संस्कार प्राप्त किये एवं बाद में जिन्होंने पूज्यश्री को गुरुरूप में स्वीकार कर अपनी आध्यात्मिक यात्रा परिपूर्ण की, उन पुण्यशीला माँ महँगीबा एवं पूज्यश्री के बीच कैसा व्यवहार होता रहा होगा ऐसी जिज्ञासा पूज्यश्री के साधकों में हो, यह स्वाभाविक ही है। अतः यहाँ इसी जिज्ञासा को कुछ अंश तक तृप्त करने का प्रयास किया जा रहा है :

स्थल : हिम्मतनगर आश्रम।

(पू. बापू अम्मा को प्यार से 'जीजल माँ' कहा करते थे। एक दिन...)

पूज्यश्री : ''कथा करने जाता हूँ।''

अम्मा : ''मुझे 'जीजल माँ' कहते हो और छोड़कर चले जाते हो ?''

पूज्यश्री : ''मेरी एक माँ थोड़े ही है, लाखों हैं। सब रोती हैं।''

अम्मा : ''...तो मैं भी तो रोती हूँ न ?''

पूज्यश्री : ''रोना नहीं, ॐ... ॐ... करना।''

अम्मा : ''आप यहीं बैठो।''

पूज्यश्री : ''बहुत फोन आ रहे हैं... लोग बुला रहे हैं।''

अम्मा : ''...तो क्या हुआ ? नहीं जाने का। उनसे कह दो कि मेरी माँ नन्हीं-सी बालिका है। मैं नहीं आऊँगा।'' यह सुनकर पूज्यश्री का हृदय भर आया कि कैसा दिव्य भाव है माँ का !

*

स्थल : शांति वाटिका, अमदावाद।

जून '९९ की बात है । पूज्यश्री हरिद्वार के सत्संग समारोह में पधारे हुए थे । इधर अम्मा सारा दिन पूज्य बापू को याद करती रहीं । फिर न रहा गया तो असंभव-सा होने के बावजूद भी पूज्यश्री के कक्ष तक गयीं एवं दरवाजा ठोंक-ठोंककर कहने लगीं :

''मुझे साँईं चाहिए... मुझे साँईं चाहिए...''

अम्मा को मनाने का काफी प्रयास किया गया, पर न मानीं । अंततः हरिद्वार के व्यस्ततम कार्यक्रम में से भी समय निकालकर साँईं को आना ही पड़ा अम्मा के पास । कैसी थी उनकी करुण पुकार !

*

स्थल : शांति वाटिका, अमदावाद।

कभी-कभी अम्मा कह उठतीं : ''इस बार साँईं आयें तो उन्हें पकड़कर रखना, इधर बैठा देना, छुपा देना ताकि कहीं जा न सकें ।''

जब पूज्यश्री को इस बात का पता चला तब उनका हृदय भावविभोर हो उठा अपनी माँ के प्रेम को देखकर ! अम्मा का प्रेम ही तो था जो उन्हें बार-बार अमदावाद खींच ले आता ।

*

स्थल : शांति वाटिका, अमदावाद।

कुछ ही महीने पहले की बात है । पूज्यश्री एवं पूजनीया अम्मा कुर्सी पर बैठे हुए थे ।

अम्मा : ''सेविका कहती है कि 'स्वामीजी इतना प्यार करते हैं, इतना आपके लिये आते हैं फिर क्यों आपको चले जाने का विचार आता है ?' आप हमेशा मना करते हो, कभी तो छुट्टी दे दो कि जायें ? अम्मा मरे कि जिये ? अब अम्मा बैठकर क्या करेगी ?''

पूज्यश्री : ''अम्मा आत्मज्ञान पक्का करे ।''

अम्मा : ''आप कह दो कि 'अम्मा भले जाये ।' आप अंदर में न रखो कि 'अम्मा न जायें... अम्मा न जायें...' ॐ आनंद... ॐ आनंद...''

कैसी थी अम्मा की सरलता कि पूज्यश्री को भी कह दिया कि 'आप अंदर न रखो कि अम्मा न जायें !'

*

स्थल : शांति वाटिका, अमदावाद।

पूज्यश्री सत्संग के लिये शांति वाटिका से आश्रम में जा रहे थे ।

अम्मा : ''दयालु हो । पूरे दिन कथा करते हो । दिन में तो कथा की, अभी रात में भी करोगे क्या ?''

पूज्यश्री : ''ॐ... ॐ... ॐ... अम्मा ! उदास क्यों होती हो ? अपना दिल क्यों छोटा करती हो ? अम्मा को तो ज्ञान है, अम्मा भगवान हैं, अम्मा तो खुद खुदा हो गयी हैं... अपने को 'जेठे माँ' (जेठानंद की माँ) मानती हो क्या ?''

अम्मा : ''नहीं ।''

पूज्यश्री : ''फिर खुद को क्या समझती हो ?''

अम्मा : ''मैं तो ब्रह्म हूँ... ज्ञानस्वरूप हूँ ।''

पूज्यश्री : ''बस । ...तो फिर मौज में रहो न !''

अम्मा : ''जिस समय साँईं आते हैं तब मौज रहती है फिर तो... कुछ अच्छा नहीं लगता ।''

पूज्यश्री : ''ऐसा चिंतन करो कि शरीर नहीं है । शरीर को चलानेवाला चेतन आत्मा है ।''

(फिर पूज्यश्री अम्मा का हाथ देखते हुए कहते हैं :)

अम्मा आनंदस्वरूप होंगी । भगवान मिलेंगे । भगवान पूछेंगे कि अम्मा क्या चाहिए ? ...तो फिर क्या कहोगी ?''

अम्मा : ''कुछ नहीं चाहिए ।''

(पूज्यश्री पुनः उठकर जाने लगते हैं ।)

अम्मा : ''अभी आप यहीं बैठो ।''

पूज्यश्री : ''बैठा रहूँ ? कथा नहीं करूँ ?''

अम्मा : ''सारा दिन तो जाकर बैठ जाते हो ?''

पूज्यश्री : ''लोग खुश होते हैं ।''

अम्मा : ''लोग खुश हों और हम यहाँ बैठे देखते रहें ?''

पूज्यश्री : ''क्यों देखती रहो ? 'मैं खुद खुदा हूँ... मैं खुद साँईं हूँ... मैं खुद आत्मा हूँ...' ऐसा चिंतन करना । शरीर को क्यों देखना ?''

विनोद के क्षणों में भी ब्रह्मज्ञान की बातें ! माँ के साथ सहज वार्त्तालाप भी ब्रह्मज्ञान से भरपूर होता था पूज्यश्री का ।

पूज्यश्री के प्रति अम्मा का दिव्य, उत्कट प्रेम और पूज्यश्री का ब्रह्मज्ञान... कैसा सुंदर समन्वय ! न किसी पांडित्यपूर्ण भाषा की जरूरत, न किसी वेद-उपनिषद् के अध्ययन की आवश्यकता । हँसते-खेलते, विनोद करते ही गूढ़ ब्रह्मज्ञान की बातें । धन्य थीं वे पूज्यश्री की जननी और धन्य था उनका पूज्यश्री के प्रति प्रेम !

(संकलित)

"माता देवहूति ने अपने पुत्र कपिल मुनि में भगवद्बुद्धि करके परम पद पाया।
इस अभूतपूर्व व एकमात्र घटना को नौ लाख से भी अधिक वर्षों बाद अपनी दृढ़ श्रद्धा एवं अनोखी गुरु-निष्ठा द्वारा
पुनर्जीवित करनेवाली परम पूजनीया श्री श्री माँ महँगीबा को कोटि कोटि नमन !"

परम पूजनी

महाप्रयाण

दिल्ली

दिनांक : ४ नवम्बर, १९९९ को ब्राह्ममुहूर्त में ५ बजकर ३७ मिनट पर
माँ महँगीबा ने पूज्यश्री की अनुमति से उन्हींकी गोद में अंतिम श्वास लेकर महाप्रयाण किया। पास में बैठे हैं श्री नारायण साँई एवं माता श्री लक्ष्मी देवी।

बचपन में पूज्यश्री को अपने कंधों पर उठानेवाली
माँ महँगीबा को स्वयं कंधा देकर महासम्मान यात्रा में ले जाते हुए पूज्यश्री।

संत माँ की महासम्मान यात्रा में
स्वयं उपस्थित रहकर भक्तों को धैर्य देते हुए पूज्यश्री।

अपनी सारी सुरक्षा व्यवस्था को दरकिनार कर
माँ के अंतिम दर्शन को दौड़े आये केन्द्रीय गृहमंत्री श्री लालकृष्ण अडवाणी।

पूज्यश्री के समक्ष द्रवित हृदय से माँ को श्रद्धांजली अर्पित करते हुए
भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री कुशाभाऊ ठाकरे।

घण्टों भर शांतिपूर्वक खड़े रहकर हजारों श्रद्धालुओं ने दी

माँ महँगीबा के अंतिम दर्शन कर श्रद्धांजली अर्पित करते हुए वि.हि.प. के
श्री अशोक सिंघल एवं केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री श्री मुरली मनोहर जोशी।

श्रद्धालुओं के दर्शनार्थ अपनी ब्रह्मलीन दादीश्री को कंधा देकर व्यास भवन की ओर लाते हुए
पूज्य नारायण साँईं एवं आश्रमवासी साधक।

पूज्या अम्मा को भावपूर्ण हृदय से प्रणाम कर उनकी
अंतिम स्मृति को हृदय-पटल पर अंकित करते हुए आश्रमवासी साधक।

कभी गुरुपूनम पर गुरुदर्शन की लंबी-लंबी कतारें तो आज
माँ महँगीबा के अंतिम दर्शन के लिए...

गुजरात राज्य के मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल ने
पूज्या माँ को नमन कर अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये।

पूज्य माँ को नमन करके श्रद्धांजली अर्पित करते हुए
गुजरात के महामहिम राज्यपाल श्री सुंदरसिंह भण्डारी

अमदावाद के प्रमुख मार्गों से होकर निकाली गई पूजनीया माँ महँगीबा की महासम्मान यात्रा में सहभागी लाडले पौत्र
श्री नारायण साँईं एवं हजारों श्रद्धालुगण।

माँ को तिलक करते हुए पूज्य बापूजी के चेहरे पर वही मुस्कान...
'जैसा अमृत तैसी विष खाटी' यह वचन सार्थक होता हुआ दिखाई दिया।

महासमाधि की ओर प्रस्थान करने के पूर्व...

पुष्पों से सुसज्जित पालकी में, मोक्ष-कुटीर की परिक्रमा कराकर माँ को महासमाधि स्थल की ओर ले जाते हुए।

समाधि-स्थल पर पूज्या माँ महँगीबा।
बस, यह अंतिम दर्शन है माँ... !

प्रसिद्ध संत श्री मोरारि बापू ब्रह्मलीन श्री माँ महँगीबा के पावन समाधि-स्थल पर श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए।

'मानवसेवा ही प्रभुसेवा है...' दरिद्रनारायणों की सेवा में सतत रत ब्रह्मलीन श्री श्री माँ महँगीबा।

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज की पूजनीया मातुश्री माँ महँगीबा अर्थात् हम सबकी पूजनीया अम्मा के विशाल एवं विराट व्यक्तित्व का वर्णन करना मानों, गागर में सागर को समाने की चेष्टा करना है। वात्सल्य और प्रेम की साक्षात् मूर्ति, परोपकारिता एवं परदुःखकातरता से प्लावित हृदय, दिव्य गुरुनिष्ठा, स्वावलंबन एवं कर्मनिष्ठा, निरभिमानिता की मूर्ति, भारतीय संस्कृति की रक्षक... किन-किन गुणों का वर्णन करें ? फिर भी उनके महान् जीवन की वाटिका के कुछ पुष्प यहाँ प्रस्तुत करते हैं, जिनका सौरभ जन-जन को सुरभित किये बिना न रह सकेगा।

अम्मा की गुरुनिष्ठा

अम्मा अर्थात् पूर्ण निरभिमानिता का मूर्त स्वरूप। उनका परोपकारी सरल स्वभाव, निष्काम सेवाभाव एवं परहितचिंतन किसीको भी उनके चरणों में स्वाभाविक ही झुकने के लिए प्रेरित कर दे। अनेकों साधक जब अम्मा के दर्शन करने के लिए जाते तब कई बार संसार के ताप से तप्त हृदय उनके समक्ष खुल जाते : ''अम्मा ! आप आशीर्वाद दो न ! मैं परेशानियों से छूट जाऊँ...''

अम्मा का गुरुभक्त हृदय सामनेवाले के हृदय में उत्साह एवं उमंग का संचार कर देता एवं उसकी गुरुनिष्ठा को मजबूत बना देता। वे कहतीं :

''गुरुदेव बैठे हैं न ! हमेशा उन्हीं से प्रार्थना करो कि 'हे गुरुवर ! हम आपके साथ का यह संबंध सदा के लिए निभा सकें ऐसी कृपा करना... हम गुरु से निभाकर ही इस संसार से जायें...' माँगना हो तो गुरुदेव की भक्ति ही माँगना। मैं भी उनके पास से यही माँगती हूँ। अतः तुम्हें मेरा आशीर्वाद नहीं अपितु गुरुदेव का अनुग्रह माँगते रहना चाहिए। वे ही हमें हिम्मत देंगे। बल देंगे। वे शक्तिदाता हैं न !''

साधना-पथ पर चलनेवाले गुरुभक्तों को अम्मा का यह उपदेश अपने हृदयपटल पर स्वर्णाक्षरों से अंकित कर लेना चाहिए।

स्वावलंबन एवं परदुःखकातरता

अम्मा प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ४-५ बजे उठ जातीं और नित्य कर्म से निपटकर पहले अपने नियम करतीं। कितना भी कार्य हो, पर एक घण्टा तो जप करती ही थीं। यह बात तब की है जब तक उनके शरीर ने उनका साथ दिया।

जब शरीर वृद्धावस्था के कारण थोड़ा अशक्त होने लगा तो फिर तो दिन भर जप करती रहती थीं।

८२ वर्ष की अवस्था तक तो अम्मा अपना भोजन स्वयं बनाकर खाती थीं। आश्रम के अन्य सेवाकार्य करतीं, रसोईघर की देख-रेख करतीं। बगीचे में पानी पिलातीं, सब्जी आदि तोड़कर लातीं, बीमार के हालचाल पूछकर आतीं एवं रात्रि में भी एक-दो बजे आश्रम का चक्कर लगाने निकल पड़तीं। यदि शीतकाल का मौसम होता, कोई ठंड से ठिठुर रहा होता तो चुपचाप उसे कंबल ओढ़ा आतीं। उसे पता भी नहीं चलता और वह शांति से सो जाता। उसे शांति से सोते देखकर अम्मा का मातृहृदय संतोष की सांस लेता। इसी प्रकार गरीबों में भी ऊनी वस्त्र एवं कंबल का वितरण पू. अम्मा करतीं-करवातीं।

उनके लिये तो कोई भी पराया न था। चाहे आश्रमवासी बच्चे हों या सड़क पर रहनेवाले दरिद्रनारायण, सबके लिये उनके वात्सल्य का झरना सदैव बहता ही रहता था। किसीको कोई कष्ट न हो, दुःख न हो, पीड़ा न हो इसके लिये स्वयं को कष्ट उठाना पड़े तो उन्हें मंजूर था, पर दूसरे की

पीड़ा, दूसरे का कष्ट उनसे न देखा जाता था।

उनमें स्वावलंबन एवं परदुःखकातरता का अद्भुत सम्मिश्रण था। वह भी इस तरह कि उसका कोई अहं नहीं, कोई गर्व नहीं। 'सबमें परमात्मा है अतः किसीको दुःख क्यों पहुँचाना ?' यह सूत्र उनके पूरे जीवन में ओत-प्रोत नज़र आता था। व्यवहार तो ठीक, वाणी के द्वारा भी कभी किसीका दिल अम्मा ने दुःखाया हो, ऐसा देखने में नहीं आया। सचमुच, पू. अम्मा के ये सद्गुण आत्मसात् करके प्रत्येक मानव अपने जीवन को दिव्य बना सकता है।

अम्मा में माँ यशोदा जैसा भाव

जब पाकिस्तान में थीं तब तो अम्मा नित्य नियम से छाछ-मक्खन बाँटा ही करती थीं लेकिन भारत में आने पर भी उनका यह क्रम कभी नहीं टूटा।

अपने आश्रम-निवास के दौरान अम्मा अपने हाथों से ही छाछ बिलोतीं एवं लोगों में छाछ-मक्खन बाँटतीं।

जब तक शरीर ने साथ दिया तब तक स्वयं दही बिलोया लेकिन ८२ वर्ष की अवस्था के बाद जब शरीर असमर्थ हो गया, तब भी दूसरों से मक्खन निकलवाकर बाँटा करतीं।

अपने जीवन के अंतिम ३-४ वर्ष अम्मा ने एकदम एकांत शांत स्थल शांति वाटिका में बिताये। वहाँ भी अम्मा कभी-कभार आश्रम से मक्खन मँगवाकर वाटिका के साधकों को देतीं।

अपनी जीवनलीला समाप्त करने से ४-५ महीने पूर्व अम्मा हिंमतनगर आश्रम में थीं। वहाँ तो मक्खन मिलता भी नहीं था तब अमदावाद आश्रम से मक्खन मँगवाकर वहाँ के साधकों में बँटवाया। सबको मक्खन बाँटने में पू. अम्मा बड़ी तृप्ति का अनुभव करतीं। ऐसा लगता मानों, माँ यशोदा अपने गोप-बालकों को मक्खन खिला रही हों !

देने की दिव्य भावना

अम्मा कभी किसीको प्रसाद लिये बिना न जाने देती थीं। यह तो उनके संपर्क में आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति का अनुभव है।

पिछली नवरात्रि की घटना है। आगरा का एक भाई अम्मा को भेंट करने के लिए एक गुलदस्ता लेकर आया। दर्शन करके वह भाई तो चला गया। सेविका को याद न रहा उसे प्रसाद देने का। अम्मा को इस बात का बड़ा दुःख हुआ कि : 'वह भाई प्रसाद लिये बिना चला गया !'

अचानक वह भाई किसी कारणवश पुनः अम्मा की कुटीर के पास आया। उसे बुलाकर अम्मा ने प्रसाद दिया, तभी उनको चैन पड़ा।

ऐसा तो एक-दो का नहीं, सैकड़ों-हजारों का अनुभव है कि आगन्तुक को प्रसाद दिये बिना अम्मा नहीं जाने देती थीं। देना, देना और देना... यही उनका स्वभाव था। वह देना भी कैसा कि कोई संकीर्णता नहीं, देने का कोई अभिमान नहीं !

ऐसी सहृदय एवं परोपकारी माँ के यहाँ यदि संत अवतरित न हों तो कहाँ हों ?

गरीब कन्याओं के विवाह में मदद

पू. माँ का स्वभाव अत्यंत परोपकारी था। गरीबों की वेदना उनके हृदय को पिघलाकर रख देती थी। कभी-भी किसीके दुःख-पीड़ा की बात उनके कानों तक पहुँचती तो फिर उसकी सहायता कैसे करनी है- इसी बात का चिंतन माँ के मन में चलता रहता था और जब तक उसे यथायोग्य मदद न मिल जाती तब तक वे चैन से बैठती तक नहीं।

एक गरीब परिवार में कन्या की शादी थी। जब पू. माँ को इस बात का पता चला तो उन्होंने अत्यंत दक्षता के साथ उसे मदद करने की योजना बना डाली। उस परिवार की आर्थिक स्थिति जानकर लड़की के लिए वस्त्र एवं आभूषण बनवा दिये और शादी के खर्च का बोझ कुछ हल्का हो- इस ढंग से आर्थिक मदद भी की और वह भी इस तरह से कि लेनेवाले को पता तक न चल पाया कि यह सब पू. माँ के दयालु स्वभाव की देन है।

कई गरीब परिवारों को पूजनीया माँ की ओर से कन्या की शादी में यथायोग्य सहायता इस प्रकार से मिलती रहती थी मानों, उनकी अपनी ही बेटी की शादी हो !

अम्मा का उत्सवप्रेम

भारतीय संस्कृति के प्रत्येक पर्व-त्योहारों को मनाने के लिये अम्मा सभी को प्रोत्साहित किया करतीं थीं एवं स्वयं भी पर्व के अनुरूप सबको प्रसाद बाँटा करती थीं जैसे- मकर संक्रान्ति पर तिल के लड्डू... आदि। आश्रम के पैसों से दान का बोझ न चढ़े इसलिए अपने ज्येष्ठ पुत्र जेठानंद से पैसे लेकर पू. अम्मा पर्वों पर प्रसाद दिया करतीं।

सिंधियों का एक विशेष त्योहार है 'तीजड़ी' जो रक्षाबंधन के तीसरे दिन आता है। उस दिन चाँद के दर्शन-पूजन करके ही स्त्रियाँ भोजन करती हैं।

अभी की ही बात है। अम्मा की सेविका ने भी तीजड़ी का व्रत रखा था। उस वक्त अम्मा हिंमतनगर में थीं। रात्रि हो चुकी थी। सेविका ने अम्मा से भोजन के लिये प्रार्थना की तो अम्मा बोल पड़ीं : ''तू चाँद देखकर खायेगी। न्याणी (कन्या) भूखी रहे और मैं खाऊँ ? नहीं। जब चाँद दिखेगा, मैं भी तभी खाऊँगी।''

अम्मा भी चाँद की राह देखती हुईं बाहर कुर्सी पर बैठी रहीं। जब चाँद दिखा, तब अपनी सेविका के साथ ही अम्मा ने रात्रि-भोजन किया। कैसा मातृहृदय था अम्मा का ! फिर हम उन्हें 'जगज्जननी' न कहें तो क्या कहें !

सबका सदुपयोग होना चाहिए

अम्मा अमदावाद आश्रम में रहती थीं तब की यह बात है। कई लोग आश्रम में दर्शन के लिये आते, 'बड़ बादशाह' की परिक्रमा करते एवं वहाँ का जल ले जाते। यदि उन्हें पानी के लिये खाली बोतल न मिलती तो अम्मा के पास आ जाते एवं अम्मा उन्हें बोतल दे देतीं।

अम्मा के पास इतनी सारी बोतलें कहाँ से आती थीं, जानते हैं ? अम्मा पूरे आश्रम में चक्कर लगातीं तब यत्र-तत्र पड़ी हुई गंदी बोतलें ले आतीं, उसे गर्म पानी एवं साबुन से साफ करके सँभालकर रख देतीं और जरूरतमंदों को दे देतीं।

इसी प्रकार शिविरों के उपरांत कई लोगों की चप्पलें पड़ी होती थीं, उनकी जोड़ी बनाकर रखतीं एवं उन्हें गरीबों में बाँट देतीं।

ऐसा था उनका खराब में से अच्छा बनाने का स्वभाव ! 'मैं विश्ववंदनीय संत की माँ हूँ...' यह अभिमान तो उन्हें छू तक न सका था। बस, प्रत्येक चीज का सदुपयोग होना चाहिए फिर वह खाने की चीज हो या पहनने-ओढ़ने की।

अहं से परे

अम्मा के सेवाकार्य का क्षेत्र जितना विशाल था उतनी ही उनकी निरभिमानिता भी महान् थी। उनके सेवाकार्य का किसीको पता चल जाता तो उन्हें अत्यंत संकोच होता। इसीलिये उन्होंने अपना सेवाक्षेत्र इस प्रकार विकसित किया कि उनके बायें हाथ को भी पता न चलता कि दायाँ हाथ कौन-सी सेवा कर रहा है।

यदि कोई कृतज्ञता व्यक्त करने के लिये उन्हें प्रणाम करने आता तो वे नाराज हो जातीं। अतः उनकी सेविका इस बात की बड़ी सावधानी रखती कि कोई अम्मा को प्रणाम करने न आये।

जिन्होंने जीवन में केवल देना ही सीखा और सिखाया हो, उनसे नमन का ऋण भी सह्य नहीं होता था। वे केवल इतना ही कहतीं : ''जिसने सब दिया है उस परमात्मा को ही नमन करें।''

उनकी मूक सेवा के आगे मस्तक अपने-आप झुक जाता है। उनकी निरभिमानिता, निष्कामता एवं मूक सेवा की भावना युगों-युगों तक लोगों के लिए प्रेरणादायी एवं पथ-प्रदर्शक बनी रहेगी। **(संकलित)**

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

विश्वहित के लिये जिन्होंने दिये
सद्गुरु आसाराम हैं।
उन माँ महँगीबा के चरणों में,
बारंबार प्रणाम हैं ॥

भारत की यह पुण्यशाली धरा अनादि काल से अनेकों ऋषि-मुनियों एवं संत-महापुरुषों की चरणरज से पावन होती रही है। उसी शृंखला में वर्त्तमान में पूरे विश्व को आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति से सराबोर करनेवाले महापुरुष हैं पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज और आपने जिनकी कोख को पावन किया वे थीं जगज्जननी माँ महँगीबा।

स्वभाव से शांत, नम्र एवं निष्कामता की मूर्ति माँ महँगीबा ने अपना पूरा जीवन एक धर्मपरायण समाजसेविका के रूप में बिताया। अपने लिये कम-से-कम खर्च करके गरीब, असहाय लोगों की सेवा करना, अपने संकल्प के प्रति दृढ़ निश्चय रखना और विश्व के प्रत्येक प्राणी में परमात्मा का दर्शन करना यह उनका सहज स्वभाव था। श्री श्री माँ महँगीबा ने अमदावाद में महिला उत्थान केन्द्र की स्थापना करवाकर महिलाओं के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। आश्रमवासी साधक-साधिकाओं के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं नैतिक उत्थान का भी वे बहुत ध्यान रखती थीं। उनके सान्निध्य में आनेवालों के लिए उनका जीवन ही एक मार्गदर्शक बन चुका है।

विश्वभर को ज्ञानामृत का पान करानेवाले संत श्री आसारामजी बापू की मातुश्री श्री श्री माँ महँगीबा का महाप्रयाण ९२ वर्ष की आयु में दिनांक : ४ नवम्बर '९९ के दिन झटीकरा, दिल्ली में प्रातः ५ बजकर ३७ मिनट पर हुआ। उनके अंतिम समय में पू. बापू स्वयं वहाँ उपस्थित थे। उनके पार्थिव शरीर को उसी दिन दोपहर बाद करोलबाग में वंदे मातरम् रोड पर स्थित आश्रम में ले जाया गया।

मातुश्री के महानिर्वाण समाचार को पाकर हजारों-हजारों नर-नारियों के अलावा केन्द्रीय गृहमंत्री श्री लालकृष्ण अडवाणी, मानव संसाधन मंत्री श्री मुरली मनोहर जोशी, शिक्षा राज्यमंत्री श्री जयसिंह राव गायकवाड़ पाटिल, भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री कुशाभाऊ ठाकरे, विश्व हिन्दू परिषद के अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल सहित अनेक गणमान्य नागरिकों ने दिल्ली आश्रम में पहुँचकर उनको अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजली अर्पित की।

दिनांक : ५ नवम्बर को दोपहर २ बजे से रवीन्द्र रंगशाला के सामने, वंदे मातरम् रोड से शोभायात्रा निकाली गयी, जो दिल्ली के प्रमुख राजमार्गों से होती हुई दिल्ली एयरपोर्ट पहुँची। वहाँ से विमान द्वारा माँ महँगीबा के शरीर को अमदावाद लाया गया।

दिनांक : ६ नवम्बर को दोपहर २ बजे तक उनका शरीर लोगों के दर्शनार्थ अमदावाद आश्रम में ही रखा गया। यहाँ भी हजारों की संख्या में जनसैलाब उनके अंतिम दर्शन के लिये उमड़ पड़ा। गुजरात राज्य के राज्यपाल श्री सुंदरसिंह भण्डारी एवं मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल को पता चला तो वे दौड़े चले आये। उन्होंने एवं उनके मंत्रिमण्डल के कई सदस्यों तथा अन्य पक्षवालों ने भी 'संत की माँ... सबकी माँ' को श्रद्धांजली अर्पित की। सभी पक्षवालों में से कइयों ने स्थल पर आकर श्रद्धा-सुमन चढ़ाये तो कइयों ने श्रद्धांजली-संदेश भेजे। प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी, राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत, मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह तथा अन्य

कई गणमान्य लोगों ने श्रद्धा-संदेश भेजे। दोपहर २ बजे से अमदावाद के प्रमुख मार्गों से शोभायात्रा निकाली गयी जिसमें करीब २०-२५ हजार लोग शामिल थे और लाखों लोगों ने इस पुण्यात्मा पतितपावनी संत माँ के आखिरी दर्शन किये।

दिनांक : ७ नवम्बर को वेदमंत्रों के उच्चारण के साथ दोपहर एक बजे माँ महँगीबा को महासमाधि दी गयी।

माँ महँगीबा का स्थूल शरीर भले आज हमारे बीच नहीं है लेकिन उनके द्वारा जगायी गयी निष्काम सेवा, प्रभुभक्ति व आत्मज्ञान की प्रगटाई हुई जगमग ज्योति मानव समाज को प्रकाश देती रहेगी, चिरकाल तक लाखों लोगों का पथ-प्रदर्शन करती ही रहेगी। इन 'माँ' को कैसे प्रणाम करें... क्या शब्द कहें जिन्होंने शोक-मोह की वेला में जगत को संतरत्न दिया ! पूरा विश्व इस माँ का ऋणी है।

उनके श्रीचरणों में समर्पित है श्रद्धांजली... भावांजली...

*

श्रद्धांजली-संदेश

''श्रद्धेय बापूजी !

यह जानकर गहरा शोक हुआ कि आपकी पूज्या माताजी अब संसार में नहीं रहीं। माता के स्नेह की छाया से बढ़कर कोई छाया नहीं होती। आप शोक और कष्ट में दूसरों को ढाढ़स बँधाते रहते हैं। आपके शोक की घड़ी में हम सब आपके साथ हैं।

परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वे दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें और समस्त परिवार को यह शोक सहन करने की शक्ति दें।

कृपा बनी रहे।''

– श्री अटल बिहारी वाजपेयी
प्रधानमंत्री, भारत सरकार।

*

''श्रीराम जय राम जय-जय राम...

परम पूज्य बापू ! सब साधक भाई-बहन ! 'श्रीरामचरितमानस' में आता है :

सोचनीय सबहीं बिधि सोई।
जो न छाड़ि छलु हरि जन होई॥

'वह तो सभी प्रकार से सोच करने योग्य है जो छल छोड़कर हरि का भक्त नहीं होता।'

मैं तो केवल परम पूजनीया माँ की विदाई को वंदन करने, अपने हृदय का भाव और श्रद्धा-सुमन समर्पित करने के लिये आया हूँ। उनकी चेतना के, उनकी ऊर्जा के आशीर्वाद सब पर उतरे ही हैं, उन्हें हम सब प्राप्त करें। इस निमित्त पू. बापू के दर्शन करने को मिले और आप सबकी साधना-तपस्या के भी दर्शन हुए। विशेष कुछ न कहते हुए... कई वर्ष पूर्व मैं इस आश्रम (संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद) में आया था। पूज्य बापू के दर्शन करने अब कई वर्षों के बाद आ पाया। कुछ अलग ही स्वरूप... **दिने दिने नवं नवं... प्रतिक्षणे वर्धमानम्...** ऐसा कुछ हो रहा है और हो, यह स्वाभाविक ही है। बस, पू. माँ की चेतना को मेरे प्रणाम ! पू. बापू को प्रणाम ! आप सभी को जय सियाराम !''

– संत श्री मोरारि बापू, सौराष्ट्र।

*

''विदेशी मदर को हमारे देश में राष्ट्रीय सम्मान मिला- सेवा के नाम पर... और हमारे देश की माँ जिन्होंने छुपे रूप से मानवमात्र की सेवा की, लाखों-करोड़ों की सेवा करनेवाला संत सपूत जिनकी कोख ने दिया, उन माँ के सम्मान के लिए सरकार क्या करती है, यह प्रजा को देखना है।''

– श्री नटूभाई शास्त्री, जामनगर।

''महाप्रयाण पर पुष्पांजली अर्पित करना, यह तो एक लोकव्यवहार है। हृदय की भावना से हम यह श्रद्धांजली अर्पित कर रहे हैं। पूज्य माताजी ने जो कुछ किया, वह अनुपम एवं अद्वितीय है। वे शक्तिस्वरूपा थीं, वही शक्ति संत श्री आसारामजी बापू के रूप में हमारे लिए हस्तांतरित कर गईं एवं प्रेरणा देती गईं कि हम भी शक्तिशाली बनें, कुछ कर दिखाएँ। अपना सनातन हिन्दू धर्म शक्ति का

उपासक है और आज एक तत्कालीन महा शक्ति विलीन होकर ईश्वर में मिल गयी है। विश्व को पूज्य बापू जैसा रत्न जिन माता ने दिया, उन माता की महिमा का यशोगान हम किन शब्दों में कर सकते हैं? उनको हमारे बार-बार शत शत नमन...''

– श्री केशुभाई पटेल
मुख्यमंत्री, गुजरात।

*

''माँ का वियोग और फिर वह भी उन माँ का, जिन्होंने विश्व को पूज्य बापू जैसे महापुरुष दिये, उनके वियोग का तो कहना ही क्या ? हमें वरदानस्वरूप बापूजी प्रदान करने का उनका महान् कार्य कल्पनातीत है। वे कोई साधारण नारी नहीं अपितु एक महान् देवी थीं। मैं एक बार पुनः माताजी के श्रीचरणों में श्रद्धांजली अर्पित करता हूँ।''

– श्री कुशाभाऊ ठाकरे
राष्ट्रीय अध्यक्ष, भारतीय जनता पार्टी।

*

''बहुत ही कम समय में संस्कृति का जतन और उत्थान करनेवाले हमारे आसारामजी बापू जैसे सपूत जिस माँ ने दिये हैं, ऐसी माँ को ईश्वर धरती पर बार-बार भेजा करें। उनके श्रीचरणों में नमन!''

– आचार्य श्री गिरिराज किशोरजी
महामंत्री, विश्व हिन्दू परिषद।

*

''श्रद्धेय माताजी के महाप्रयाण पर मैं अपनी श्रद्धांजली अर्पित करता हूँ। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लोकसेवा में व्यतीत किया एवं पूज्यश्री को भी उनके जीवन से काफी बल मिला है । ऐसी भाग्यशाली माता का पुत्र होना भी एक गौरव की बात है। उनके महाप्रयाण से हम सभी को सत्कार्य से जुड़ने की प्रेरणा प्राप्त हो, ऐसा प्रभु से वरदान माँगकर मैं पुनः अपनी विनम्र श्रद्धांजली अर्पित करता हूँ।''

– महामहिम श्री सुन्दरसिंह भण्डारी
राज्यपाल, गुजरात।

*

''आपकी परम पूजनीया माताजी के स्वर्गवास के समाचार मिले। आप जैसे परम ज्ञानी हेतु मेरे पास कोई सांत्वना के शब्द नहीं मिल रहे हैं। आशा है आप निःशब्द ही मेरी भावनाओं को ग्रहण कर लेंगे।''

– श्रीमती विजया राजे सिंधिया

*

''आदरणीया माताजी के आकस्मिक निधन का समाचार प्राप्त कर हार्दिक दुःख हुआ।

अपने प्रियजनों का बिछोह यद्यपि अत्यन्त दुःखदायी होता है परन्तु ईश्वरेच्छा के सम्मुख हम सब नतमस्तक हैं, यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि आपमें कर्मयोगी, भक्त तथा ज्ञानी तीनों का ही समावेश है। आप जैसे संत-महापुरुष को, जो आज लाखों भक्तों का मार्गदर्शन कर रहे हैं, जन्म देकर वास्तव में पूजनीया माताजी की कोख धन्य हुई और उन्हें स्वतः ही सद्गति प्राप्त हो गई।

प्रभु के श्रीचरणों में हम सबकी विनम्र प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान कर शोक-संतप्त समस्त परिवार एवं भक्त-शिष्यमण्डली को इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति तथा साहस प्रदान करें।

आप सबके दुःख में सहभागी...''

– श्री अशोक सिंहल
कार्याध्यक्ष, विश्व हिन्दू परिषद।

*

''श्रद्धेय बापू!

आपकी पूज्या माताजी माँ महँगीबा के निधन का समाचार सुनकर मुझे गहरा दुःख पहुँचा है। मैं ईश्वर से दिवंगत आत्मा की शांति एवं शोकाकुल परिवार को यह दुःख सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिये प्रार्थना करता हूँ।''

– श्री दिग्विजय सिंह
मुख्यमंत्री, मध्य प्रदेश।

*

राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत और अन्य कई केन्द्रीय व राज्य मंत्रियों से भी

श्रद्धांजली संदेश लगातार प्राप्त हो रहे हैं।

श्री केदारनाथ मोदी, उद्योग समूह के चेयरमैन (मोदीनगर), देश-विदेशों से कई समाजसेवियों, उद्योगपतियों, जनप्रतिनिधियों एवं श्री योग वेदान्त सेवा समितियों ने भी अपने-अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये हैं।

*

माँ ! आपकी प्रेरणाएँ, आपकी दिशाएँ
साथ हैं हमारे।
कौन कहता है हमसे दूर गये हैं आप ?
हर घड़ी हर पल हमारे पास हैं आप ॥
भूल पायेंगे कहाँ माँ आपको ?
इतिहास का स्वर्णिम पैगाम हैं आप ॥

*

अध्यात्म के पथिकों के नाम संदेश

* संत श्री लालजी महाराज *

हम पहले भी जिनके आशीर्वाद के पात्र बन चुके हैं वे थीं माता देवहूति। उन माता ने समाज को भगवान कपिल के रूप में एक अमूल्य रत्न दिया था। ऐसे ही माँ महँगीबा ने भी भारत को संतशिरोमणि श्री आसारामजी महाराज के रूप में एक अनुपम भेंट देकर हम सबका महान् कल्याण किया है। उन्होंने अपने पूरे कुटुम्बसहित सबके कल्याण के लिए सेवाकार्य स्वीकार कर दीर्घायु को प्राप्त किया।

भारत की जनता को स्नेहार्थी बनाने का इतना बड़ा पुरुषार्थ ! जैसे दीपक स्वयं प्रकाशित होकर औरों को भी प्रकाश पहुँचाता है, वैसे ही माता महँगीबा के लाल संत श्री आसारामजी बापू ने स्वयं प्रकाशित होकर अगणित आत्माओं का भगवान से सम्बन्ध जोड़ने के लिए अमाप पुरुषार्थ किया है। हम संक्षिप्त शब्दों में इतना ही कह सकते हैं कि कलियुग में भगवान संतराज (पूज्य बापू) के रूप में अवतरित हुए हैं।

आशा के पाश में सभी लोग बँधे हुए हैं। इस आशा के पाश से मुक्त करने के लिए सद्गुरु श्री लीलाशाहजी महाराज ने 'आशा' के साथ 'राम' जोड़कर हमें संत श्री आसारामजी के रूप में साक्षात् राम ही दिये हैं। जैसे प्रभात के समय में सूर्योदय होने पर अंधकार को हटाने के लिए कोई मेहनत नहीं करनी पड़ती, सूर्य की उपस्थितिमात्र से अंधकार स्वयं दूर हो जाता है, उसी प्रकार संतश्री के अस्तित्वमात्र से अज्ञानरूपी अंधकार स्वयं दूर होने लगता है। संतश्री का सत्संग ऐसा है कि भारत में ज्ञान का दिव्य प्रकाश फैल गया है।

संवत २०२१ के श्रावण में कृष्ण पक्ष की सोमवती अमावस्या को मातुश्री महँगीबा मणिनगर से मोटी कोरल स्थित पंचकुबेरेश्वर महादेव के मंदिर में पधारी थीं और उन्होंने ये शब्द कहे थे :

''मेरा लाड़ला लाल, छोटा पुत्र आसुमल कहे बिना ही घर से चला गया है। वह कहाँ होगा, कोई पता नहीं है। लालजी महाराज ! आप उससे मुलाकात करवा दो, तभी मैं अन्न-जल लूँगी।''

उसी माँ के आशीर्वाद का यह फल है कि करोड़ों-करोड़ों लोगों को इस घोर कलियुग में भी भगवत्शांति की झलकें मिल रही हैं। जनता उसका अनुभव करे और उसे पचाये, यह बहुत जरूरी है।

अब संतश्री की दो सन्तानों- चि. श्री नारायण साँईं और भारती बहन के लिए उनके माता-पिता ने, अमाप और अखूट धन-सम्पत्ति कहो या धर्म का खजाना कहो, कमाकर रखा है तथा उसे एक धरोहर के रूप में इन चिरंजीवियों को सौंपा है। उसे हर प्रकार से जैसे का तैसा सुरक्षित रखें, यही उनके लिए मातृ-पितृऋण से मुक्त होने का अवसर है। उससे अधिक करने की इच्छा न करें। राम से अधिक राम ही हैं... राम की प्राप्ति राम द्वारा ही होती है। इसीलिए आज आसारामजी बापू ने जनता के समक्ष परम कल्याण का मार्ग प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में रखा है। यह अमरवेल के समान दिन-प्रतिदिन सदा के लिए उसी भाव से प्रकाशित होती रहे, हम ऐसी भावना करें। उनकी दोनों संतानों के लिए प्रार्थना करें कि वे अपनी मर्यादा का अतिक्रमण करके कुछ न करें। भगवान उन्हें ऐसी सद्बुद्धि दें।

उस महान् अमृतसागर के हिमायती, वेद-वेदांगों के सारांश के समरस भाव में रसेश्वर भगवान श्रीकृष्ण जैसे गोपिकाओं के बीच कह गये कि :

''मैं तो आपके प्रेम का ऋणी हूँ। आज अहैतुकी कृपा करके मुझे अपने ऋण से मुक्त करना।'' ऐसे ही कुछ उद्‌गार मैंने आसारामजी बापू के श्रीमुख से उनके साधकों के साथ की वार्त्ता में सुना है। इसलिए पूज्यश्री के जो साधक हैं उनमें विरोधाभास सर्जित न हो अपितु जैसे स्वभाव से 'र' कार में 'आ' एक मात्रा है तथा उसीके सामने 'म' कार है वह मिलाकर 'श्रीराम' जैसा मोक्षमय मंत्र बनता है, उसी प्रकार परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के स्नेहार्थी सभी साधक उनके आशीर्वाद के रामरस में समा जायें। सब अपने अधिकार के अनुसार प्रारब्ध भोगें। श्री गीताजी का प्रमाण लें तो भगवान के श्रीमुख के ही शब्द हैं : **निर्वैरः निरपेक्षः।**

✻

अमर रहेगा तेरा नाम...

महँगी मैया ! सारे जग में,
अमर रहेगा तेरा नाम।
दिव्य सदा स्नेहमय जीवन,
जन्म कर्म तेरा निष्काम॥
प्रखर ओज तेज यश वैभव,
रंग भक्ति का हृदय में पाऊँ ।
ज्ञान ध्यान समता का आश्रय,
अंतरचित्त में हरि का नाम॥
धन्य धन्य तेरा आँचल है,
प्रगट ब्रह्म पावन निश्चल है।
दृढ़ता तेरी अचल अटल है,
प्रभुप्रेम है न कोई काम॥
ममता मोह तज आसक्ति,
अनन्य प्रभुभक्ति और मुक्ति।
विनय विवेक ईश्वरीय शक्ति,
सुत को ही जाना भगवान॥

औदार्य सुख का पार नहीं,
हरिरस बिन कोई सार नहीं।
सत्य नाम रूप आकार नहीं,
अजर अमर 'साक्षी' गुरुज्ञान॥

✻

ज्ञान का किया उजाला है...

महँगीबा माँ दिया तूने,
ऐसा लाल निराला है।
जन जन को जागृत कर जिसने,
ज्ञान का किया उजाला है॥
अपनी स्नेहमयी छाया में,
तूने जिसे सँवारा है।
प्रेम भक्ति ज्ञान ध्यान से,
जिसको सदा निखारा है॥
निज स्वरूप आनंदमय जीवन,
प्राणों से भी प्यारा है।
सरल हृदय सत्कर्म अनोखा,
मनवा भोला भाला है॥
नश्वर काया माया है,
चित्त चकोर निर्लेप रहा।
मुक्त सदा हरिमय हृदय,
बंधन का नहीं लेप रहा॥
दोष दुर्गुण, विषय विकार से,
चित्त सदा अलेप रहा।
सजा ज्ञान से मन मंदिर है,
तन भी एक शिवाला है॥
सींच दिया है उर आँगन में,
शील धर्म का अंकुर है।
गुरु ही ईश, राम रहीम हैं,
ब्रह्मा विष्णु शंकर हैं॥
व्यापक है निर्लेप सदा ही,
वही ब्रह्म परमेश्वर हैं।
'साक्षी' आत्मअमीं रस पाया,
प्रभु में मन मतवाला है॥

✻

[एकादशी-माहात्म्य : मोक्षदा एकादशी १९ दिसम्बर '९९]

युधिष्ठिर बोले : ''देवदेवेश्वर ! मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ? कौन-सी विधि है तथा उसमें किस देवता का पूजन किया जाता है ? स्वामिन् ! यह सब यथार्थ रूप से बताइये।''

श्रीकृष्ण ने कहा : ''नृपश्रेष्ठ ! मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का वर्णन करूँगा, जिसके श्रवणमात्र से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है। उसका नाम है : 'मोक्षदा' एकादशी, जो सब पापों का अपहरण करनेवाली है। राजन् ! उस दिन यत्नपूर्वक तुलसी की मंजरी तथा धूप-दीपादि से भगवान दामोदर का पूजन करना चाहिये। पूर्वोक्त विधि से ही दशमी और एकादशी के नियम का पालन करना उचित है। 'मोक्षदा' एकादशी बड़े-बड़े पातकों का नाश करनेवाली है। उस दिन रात्रि में मेरी प्रसन्नता के लिये नृत्य, गीत और स्तुति के द्वारा जागरण करना चाहिये। जिसके पितर पापवश नीच योनि में पड़े हों, वे इसका पुण्य दान करने से मोक्ष को प्राप्त होते हैं। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

पूर्वकाल की बात है। वैष्णवों से विभूषित परम रमणीय चम्पक नगर में वैखानस नामक राजा रहते थे। वे अपनी प्रजा का पुत्र की भाँति पालन करते थे। इस प्रकार राज्य करते हुए राजा ने एक दिन रात को स्वप्न में अपने पितरों को नीच योनि में पड़ा हुआ देखा। उन सबको इस अवस्था में देखकर राजा के मन में बड़ा विस्मय हुआ और प्रातःकाल ब्राह्मणों से उन्होंने उस स्वप्न का सारा हाल कह सुनाया।

राजा बोले : ''ब्राह्मणों ! मैंने अपने पितरों को नरक में गिरा हुआ देखा है। वे बारम्बार रोते हुए मुझसे यों कह रहे थे कि : 'तुम हमारे तनुज हो, इसलिये इस नरक-समुद्र से हम लोगों का उद्धार करो।' द्विजवरों ! इस रूप में मुझे पितरों के दर्शन हुए हैं इससे मुझे चैन नहीं मिलता। क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मेरा हृदय रूँधा जा रहा है। द्विजोत्तमों ! वह व्रत, वह तप और वह योग, जिससे मेरे पूर्वज तत्काल नरक से छुटकारा पा जायँ, बताने की कृपा करें। मुझ बलवान् एवं साहसी पुत्र के जीते-जी मेरे माता-पिता घोर नरक में पड़े हुए हैं ! अतः ऐसे पुत्र से क्या लाभ है ?''

ब्राह्मण बोले : ''राजन् ! यहाँ से निकट ही पर्वत मुनि का महान् आश्रम है। वे भूत और भविष्य के भी ज्ञाता हैं। नृपश्रेष्ठ ! आप उन्हींके पास चले जाइये।''

ब्राह्मणों की बात सुनकर महाराज वैखानस शीघ्र ही पर्वत मुनि के आश्रम पर गये और वहाँ उन मुनिश्रेष्ठ को देखकर उन्होंने दण्डवत् प्रणाम करके मुनि के चरणों का स्पर्श किया। मुनि ने भी राजा से राज्य के सातों अंगों की कुशलता पूछी।''

राजा बोले : ''स्वामिन् ! आपकी कृपा से मेरे राज्य के सातों अंग सकुशल हैं किन्तु मैंने स्वप्न में देखा है कि मेरे पितर नरक में पड़े हैं। अतः बताइये कि किस पुण्य के प्रभाव से उनका वहाँ से छुटकारा होगा ?''

राजा की यह बात सुनकर मुनिश्रेष्ठ पर्वत एक मुहूर्त तक ध्यानस्थ रहे। इसके बाद वे राजा से बोले :

''महाराज ! मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्ष में जो 'मोक्षदा' नाम की एकादशी होती है, तुम सब लोग उसका व्रत करो और उसका पुण्य पितरों को दे डालो। उस पुण्य के प्रभाव से उनका नरक से उद्धार हो जायेगा।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : ''युधिष्ठिर ! मुनि की यह बात सुनकर राजा पुनः अपने घर लौट आये। जब उत्तम मार्गशीर्ष मास आया, तब राजा वैखानस ने मुनि के कथनानुसार 'मोक्षदा' एकादशी का व्रत करके उसका पुण्य समस्त पितरोंसहित पिता को दे दिया। पुण्य देते ही क्षणभर में आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। वैखानस के पिता पितरोंसहित नरक से छुटकारा पा गये और आकाश में आकर राजा के प्रति यह पवित्र वचन बोले : 'बेटा ! तुम्हारा कल्याण हो।' यह कहकर वे स्वर्ग में चले गये।

राजन् ! जो इस प्रकार कल्याणमयी 'मोक्षदा' एकादशी का व्रत करता है, उसके पाप नष्ट हो जाते हैं और मरने के बाद वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है। यह मोक्ष देनेवाली 'मोक्षदा' एकादशी मनुष्यों के लिये चिन्तामणि के समान समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाली है। इस माहात्म्य के पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है।''

(पद्मपुराण पर आधारित)

गीता की दिव्य प्रेरणा

[गीता जयंती दिनांक : १९ दिसम्बर '९९]

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक को भारत सरकार ने आमंत्रित किया। उस वैज्ञानिक ने चर्चा करने के बाद अपनी इच्छा व्यक्त की :

''मैं संस्कृत के किसी अच्छे विद्वान् से मिलना चाहता हूँ।''

भारत सरकार ने संस्कृत के एक प्रखर विद्वान् को बुलाकर वैज्ञानिक से मुलाकात करवा दी। बातचीत पूरी होने के बाद संस्कृत के विद्वान् ने वैज्ञानिक से पूछा : ''आप अनुसंधान के क्षेत्र में इतने प्रसिद्ध हैं, महान् वैज्ञानिक आइन्स्टाइन से आपकी मित्रता है, फिर भी आपको मेरे जैसे संस्कृत के विद्वान् से मिलने की इच्छा कैसे हुई ?''

वैज्ञानिक ने कहा : ''जब दूसरा विश्वयुद्ध चल रहा था, तब मेरे अनुसंधान कार्यालय में 'क्लर्क' के पद पर एक भारतीय लड़की कार्यरत थी। मैंने उससे कहा : 'बम के ये धड़ाके कहीं हमारे प्राण न ले लें ! चलो, हम किसी सुरक्षित जगह पर चले जायें।' वह भारतीय लड़की बोली : 'क्या आप इतने बड़े होकर भी बम के धड़ाके से डरते हैं ?' मैंने कहा : 'मर गये तो ?' वह बोली : 'मृत्यु से आपको इतना भय क्यों लगता है ?' मैंने कहा : 'क्या तुझे डर नहीं लगता ?' वह बोली : 'नहीं। मुझे जरा भी डर नहीं लगता क्योंकि मैं प्रतिदिन गीता का अध्ययन करती हूँ। जिसकी मौत होती है वह शरीर मैं नहीं हूँ और जो 'मैं हूँ' उस आत्मा की कभी मौत नहीं होती। आत्मा अमर है। गीता का ऐसा ज्ञान हमारे देश में सहज में मिलता है। फिर मौत से डरूँ क्यों ?'

तब मुझे हुआ कि यद्यपि मैं इतना बड़ा वैज्ञानिक कहलाता हूँ फिर भी मैं उतना नहीं जानता जितना ज्ञान भारत की इस लड़की के पास है। अतः मुझे भी जिज्ञासा हुई और मैंने गीता खरीद ली। गीता का अध्ययन शुरू किया। अभी-भी भारत में इसी लालच से मैं आया हूँ कि संस्कृत के कोई अच्छे विद्वान् मिलें तो उनके साथ चर्चा करके गीता के दिव्य अमृत को आत्मसात् कर लूँ।''

यह है गीता के अद्भुत ज्ञान की महिमा ! क्लर्क के पद पर कार्यरत एक लड़की की निर्भयता ने एक वैज्ञानिक को गीताज्ञान पाने के लिए उत्सुक कर दिया। उस लड़की के पास निर्भयता आयी कहाँ से ? गीता के दिव्य ज्ञान से। गीता के दूसरे अध्याय के २० वें श्लोक में आता है : 'यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता।'

निर्भयता, परोपकारिता, समत्व, स्वधर्मनिष्ठा, सौम्यता, विश्वबंधुत्व एवं ब्रह्मविद्या से परिपूर्ण भारत के इस दिव्य ग्रंथ गीता का लाभ उठाकर प्रत्येक मानव अपने जीवन को उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ कर सकता है।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में बहुत-सी विद्याओं का उल्लेख है। उनमें मुख्यतः चार प्रकार की विद्याओं का वर्णन आता है :

१. अभयविद्या २. साम्यविद्या ३. ईश्वरविद्या ४. ब्रह्मविद्या

अभयविद्या : मौत का भय निवृत्त करनेवाली विद्या। मौत शरीर की होती है, आत्मा की नहीं। शरीर तो है ही नाशवान्, मरने-जन्मनेवाला और आत्मा अमर है, तो फिर मौत का भय क्यों रखना ?

साम्यविद्या : सदैव समत्व में रहने की कला सिखानेवाली विद्या। सुख आया उसके पहले भी आप थे, सुख चला जायेगा फिर भी आप रहोगे। दुःख आया तभी भी आप थे, दुःख चला जायेगा फिर भी आप वही-के-वही रहोगे। बाल्यावस्था गयी... किशोरावस्था आयी। किशोरावस्था गयी... जवानी आयी। अब जवानी जायेगी और बुढ़ापा आयेगा। ...तो अवस्थाएँ शरीर की बदलती हैं लेकिन प्रत्येक अवस्था में आप वही-के-वही आत्मा रहते हैं। इन अवस्थाओं को देखनेवाले परमात्मा साक्षीस्वरूप हैं। यदि उन पर नजर रहे तो व्यक्ति सदैव समत्व में रह सकता है। यही है गीता की साम्यविद्या।

ईश्वरविद्या : साम्यविद्या का आश्रय लेने से जरा-जरा-सी बात पर जो दुःख-सुख और परेशानी होती थी, वह शांत हो जाती है और ईश्वरविद्या का आश्रय लेने से अपने हृदय में ईश्वरीय रस प्रगट होने लगता है। अगर हम अनन्य भाव से ईश्वर की शरण स्वीकार कर लेते हैं तो ईश्वर हमारे दोष नहीं देखता कि 'इसमें ये-ये कमियाँ हैं...' वरन् हम केवल उसको चाहें तो वह हमको स्वीकार कर लेता है। यह ईश्वरविद्या है। ईश्वर ऐसा नहीं कि अच्छे-अच्छे जीवों को अपनी शरण में ले और बुरे-बुरे को न ले। इससे तो ईश्वर का ईश्वरत्व ही सिद्ध नहीं होता क्योंकि यदि ईश्वर बुरे को स्वीकार न करें तो ईश्वर को छोड़कर बुरे और किसकी शरण में जायेंगे ? इसीलिए भगवान ने कहा है :

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि॥

'यदि तू अन्य सब पापियों से भी अधिक पाप करनेवाला है, तो भी तू ज्ञानरूप नौका द्वारा निःसंदेह सम्पूर्ण पाप-समुद्र से भलीभाँति तर जायेगा।' (गीता : ४.३६)

दुराचारी से दुराचारी हो, पापी से पापी हो, वह भी यदि भगवान की शरण में आता है तो तर जाता है। यही है **गीता की** ईश्वरविद्या।

ब्रह्मविद्या : जीव-ब्रह्म के एकत्व का बोध करानेवाली विद्या है ब्रह्मविद्या। ब्रह्म जो परमात्मा है, वही सबका आत्मा बनकर बैठा है। आत्मा-परमात्मा एक है, इसका ज्ञान कराती है ब्रह्मविद्या।

मानव जीवन के पाँच क्लेश हैं : अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश यानी मृत्यु का भय। गीता की अभयविद्या अभिनिवेश अर्थात् मृत्यु के भय से बचाती है, साम्यविद्या राग-द्वेष से बचाती है, ईश्वरविद्या अस्मिता (गर्व) से बचाती है और ब्रह्मविद्या अविद्या को मिटाकर हमें अपने ब्रह्मस्वरूप में जगा देती है।

'ऋषि प्रसाद' स्वर्णपदक प्रतियोगिता

उठो ! जागो !! और दैवी कार्य में लग जाओ !!!

आकल्पजन्मकोटिनां यज्ञव्रततपः क्रियाः। ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः॥

'कल्पपर्यंत के, करोडों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ- ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं।'

जी हाँ, आप अपने सद्गुरुदेव का संतोष प्राप्त कर सकते हो... लेकिन इसके लिए आपको कोई यज्ञ, व्रत, तप या भारी परिश्रम करना नहीं है बल्कि गुरुदेव की प्रिय 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सदस्य बनाकर गाँव-गाँव, शहर-शहर व जन-जन तक यह पत्रिका पहुँचाने के दैवी कार्य का शंखनाद करना है।

जैसा कि आपको पूर्वांक से अवगत है कि 'ऋषि प्रसाद स्वर्णपदक प्रतियोगिता' के अंतर्गत जो सेवाधारी ज्यादा-से-ज्यादा सदस्य बनाएँगे ऐसे पहले पाँच सेवाधारियों को आगामी गुरुपूर्णिमा के पर्व पर पूज्यश्री के पावन करकमलों द्वारा स्वर्णपदक देकर आम सभा में पुरस्कृत किया जाएगा। 'ऋषि प्रसाद' की व्यापकता एवं सेवाधारियों का उभरता हुआ उत्साह देखकर उपरोक्त पाँच पुरस्कारों के अलावा दूसरे और पाँच पुरस्कार भी देने की करुणा-कृपा पूज्य गुरुदेव ने की है। याने 'ऋषि प्रसाद' के ज्यादा-से-ज्यादा सदस्य बनानेवाले **पहले दस सेवाधारियों को** गुरुपूर्णिमा के दिन पुरस्कृत किया जाएगा।

कई सेवाधारी इस कार्य में उत्साह से संलग्न हैं और उनकी रसीद बुकें अभी अमदावाद कार्यालय में प्राप्त नहीं हुई हैं, फिर भी प्राप्त कम्प्युटर रेकॉर्ड्स के अनुसार जिन पहले पाँच सेवाधारियों की सदस्य संख्या वर्त्तमान में अधिकतम चल रही है उन सौभाग्यशालियों के नाम निम्नानुसार हैं :

क्रमांक	सदस्य बनाये	नाम	पता
१.	१३२४	श्रीमती जयाबहन कृपलानी	ई-७/७१ अशोका सोसायटी, अरेरा, भोपाल (म. प्र.).
२.	८९६	श्री संजय कुमार	घर नं. २७०९, दूसरी मंजिल, सेक्टर ३७-सी, चण्डीगढ।
३.	८४६	श्री सुरिन्दर गुप्ता	घर नं. १७७-ई, किचलु नगर, लुधियाना (पंजाब).
४.	४९८	श्री सुभाषचंदर आनन्द	एम- महावत नगर, कपूरथला (पंजाब).
५.	४९७	श्री आर. डी. गुप्ता	१५-ए, प्रकाश नगर, मॉडल टाउन, जालन्धर (पंजाब).

...तो आएँ... देर न करें... अभी भी बहुत समय है। अभी आठ महीने बाकी हैं। आप भी इस प्रतियोगिता में सहभागी होकर अपना भाग्य आजमाएँ और आज ही अपना सेवाधारी क्रमांक और रसीद बुकें 'ऋषि प्रसाद' मुख्यालय, अमदावाद से प्राप्त करें।

कृपया याद रखें : व्यक्तिगत स्तर पर बनाये गये सदस्यों की संख्या ही इस प्रतियोगिता का आधार है, इसलिये सेवाधारी अपने द्वारा बनाये गये सदस्यों की रसीद में अपना सेवाधारी क्रमांक अवश्य लिखें।

स्वास्थ्योपयोगी मेथी

आहार में हरी सब्जियों का विशेष महत्त्व है। आधुनिक विज्ञान के मतानुसार हरे पत्तोंवाली सब्जियों में 'क्लोरोफिल' नामक तत्त्व रहता है जो कि जंतुओं का प्रबल नाशक है। दाँत एवं मसूढ़ों में सड़न उत्पन्न करनेवाले जंतुओं को यह 'क्लोरोफिल' नष्ट करता है। इसके अलावा इसमें प्रोटीन तत्त्व भी पाया जाता है।

हरी सब्जियों में लौह तत्त्व भी काफी मात्रा में पाया जाता है, जो पाण्डुरोग (रक्ताल्पता) व शारीरिक कमजोरी को नष्ट करता है। हरी सब्जियों में स्थित क्षार रक्त की अम्लता को घटाकर उसका नियमन करता है।

हरी सब्जियों में मेथी की भाजी का प्रयोग भारत के प्रायः सभी भागों में बहुलता से होता है। इसको सुखाकर भी उपयोग किया जाता है। इसके अलावा मेथीदानों का प्रयोग बघार के रूप में तथा कई औषधियों के रूप में भी किया जाता है। ठण्डी के दिनों में इसका 'पाक' बनाकर भी सेवन किया जाता है।

वैसे तो मेथी प्रायः हर समय उगायी जा सकती है फिर भी मार्गशीर्ष से फाल्गुन महीने तक ज्यादा उगायी जाती है। कोमल पत्तेवाली मेथी कम कड़वी होती है।

मेथी की भाजी तीखी, कड़वी, रुक्ष, गरम, पित्तवर्धक, अग्निदीपक (भूखवर्धक), पचने में हल्की, मलावरोध को दूर करनेवाली, हृदय के लिए हितकर एवं बलप्रद होती है। सूखे मेथीदानों की अपेक्षा मेथी की भाजी कुछ ठण्डी, पाचनकर्त्ता, वायु की गति ठीक करनेवाली और सूजन मिटानेवाली है। मेथी की भाजी प्रसूता स्त्रियों, वायुदोष के रोगियों एवं कफ के रोगियों के लिए अत्यंत हितकर है। यह बुखार, अरुचि, उलटी, खांसी, वातरक्त (गाउट), वायु, कफ, बवासीर, कृमि तथा क्षय का नाश करनेवाली है। मेथी पौष्टिक एवं रक्त को शुद्ध करनेवाली है। यह शूल, वायुगोला, संधिवात, कमर के दर्द, पूरे शरीर के दर्द, मधुप्रमेह एवं निम्न रक्तचाप को मिटानेवाली है। मेथी माता का दूध बढ़ाती है, आमदोष को मिटाती है एवं शरीर को स्वस्थ बनाती है।

***** औषधि-प्रयोग *****

१. कब्जियत : कफदोष से उत्पन्न कब्जियत में मेथी की रेशेवाली सब्जी रोज खाने से लाभ होता है।

२. बवासीर : प्रतिदिन मेथी की सब्जी का सेवन करने से वायु-कफ के बवासीर में लाभ होता है।

३. बहुमूत्रता : जिन्हें एकाध घण्टे में बार-बार मूत्र त्याग के लिये जाना पड़ता हो अर्थात् बहुमूत्रता का रोग हो उन्हें मेथी की भाजी के १०० मि. ली. रस में डेढ़ ग्राम कत्था तथा तीन ग्राम मिश्री मिलाकर प्रतिदिन सेवन करना चाहिए। इससे लाभ होता है।

४. मधुप्रमेह : प्रतिदिन सुबह मेथी की भाजी का १०० मि. ली. रस पी जायें। शक्कर की मात्रा ज्यादा हो तो सुबह-शाम दो बार रस पियें। साथ ही भोजन में गेहूँ, चावल एवं चिकनी (घी-तेलयुक्त) तथा मीठी चीजों का सेवन न करने से शीघ्र लाभ होता है।

५. निम्न रक्तचाप : जिन्हें निम्न रक्तचाप की तकलीफ हो उनके लिये मेथी की भाजी में अदरक, लहसुन, गरम मसाला वगैरह डालकर बनायी गयी सब्जी का सेवन लाभप्रद है।

६. कृमि : बच्चों के पेट में कृमि हो जाने पर उन्हें भाजी का १-२ चम्मच रस रोज पिलाने से लाभ होता है।

७. सर्दी-जुकाम : कफ दोष के कारण जिन्हें हमेशा सर्दी-जुकाम-खांसी की तकलीफ बनी रहती हो उन्हें तिल अथवा सरसों के तेल में गरम मसाला, अदरक एवं लहसुन डालकर बनायी गयी मेथी की सब्जी का सेवन प्रतिदिन करना चाहिए।

८. वायु का दर्द : रोज हरी अथवा सूखी मेथी का सेवन करने से शरीर के ८० प्रकार के वायु के रोगों में लाभ होता है।

९. आँव होने पर : मेथी की भाजी के ५० मि.ली. रस में ६ ग्राम मिश्री डालकर पीने से लाभ होता है। ५ ग्राम मेथी का पाउडर १०० ग्राम दही के

साथ सेवन करने से भी लाभ होता है। दही खट्टा नहीं होना चाहिए।

१०. वायु के कारण होनेवाले हाथ-पैर के दर्द में : मेथीदानों को घी में सेंककर उसका चूर्ण बनायें एवं उसके लड्डू बनाकर प्रतिदिन एक लड्डू का सेवन करें तो लाभ होता है।

११. गर्मी में लू लगने पर : मेथी की सूखी भाजी को ठण्डे पानी में भिगोयें। अच्छी तरह भीग जाने पर मसलकर छान लें एवं उस पानी में शहद मिलाकर एक बार पिलायें। लू में लाभ होता है।

******** मेथीपाक ********

शीत ऋतु में विभिन्न रोगों से बचने के लिए एवं शरीर की पुष्टि के लिए कई परिवारों में 'मेथीपाक' का प्रयोग किया जाता है। मेथीपाक बनाने की विधि निम्नानुसार है :

विधि : मेथी एवं सोंठ ३२५-३२५ ग्राम की मात्रा में लेकर दोनों का कपड़छन चूर्ण कर लें। सवा पाँच लीटर दूध में ३२५ ग्राम घी डालें। उसमें यह चूर्ण मिला दें। यह सब एकरस होकर गाढ़ा हो जाय, तब तक उसे पकायें। उसके पश्चात् उसमें ढाई किलो शक्कर डालकर फिर से धीमी आँच पर पकायें। अच्छी तरह पाक तैयार हो जाने पर नीचे उतार लें। फिर उसमें लेंडीपीपर, सोंठ, पीपरामूल, चित्रक, अजवायन, जीरा, धनिया, कलौंजी, सौंफ, जायफल, दालचीनी, तेजपत्र एवं नागरमोथ... ये सभी ४०-४० ग्राम एवं काली मिर्च का ६० ग्राम चूर्ण डालकर मिला लें।

यह पाक ४० ग्राम की मात्रा में अथवा शक्ति अनुसार मात्रा में सुबह खायें।

यह पाक आमवात, अन्य वातरोग, विषम ज्वर, पांडुरोग, पीलिया, उन्माद, अपस्मार (मिर्गी), प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरोरोग, नासिका रोग, नेत्र रोग, प्रदर रोग आदि सभी में लाभदायक है। यह पाक शरीर के लिए पुष्टिकारक, बलकारक एवं वीर्यवर्धक भी है।

- वैद्यराज अमृतभाई
साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत।

पप्पनकलां-दिल्ली : १५ से १७ अक्तूबर '९९ के दौरान विद्यार्थियों के बहुमुखी विकास के लिए आयोजित त्रिदिवसीय **'विद्यार्थी उत्थान शिविर'** में शामिल होनेवाले विद्यार्थियों का पंजीयन महीनों पूर्व प्रारंभ हो गया था। देश के विभिन्न प्रान्तों से आये हुए हजारों विद्यार्थियों में केवल २१६०० विद्यार्थियों का ही पंजीयन हो पाया, बाकी के विद्यार्थी सुबह आते शाम को जाते, फिर दूसरी सुबह आते... उन्होंने पूज्य बापू के अनुभवसंपन्न मार्गदर्शन में शरीर को स्वस्थ, मन को प्रसन्न व बुद्धि को तेजस्वी बनाने के यौगिक प्रयोग सीखे। पूज्यपाद बापू द्वारा विद्यार्थियों को उज्ज्वल जीवन जीने व परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के लिए अनेक अनुभूत कुंजियाँ प्रदान की गईं।

महानगर के कोलाहल से दूर दक्षिण-पश्चिम दिल्ली के पप्पनकलां स्थित विशाल व वीरान मैदान में उन दिनों 'जंगल में मंगल'-सा वातावरण बना रहा।

विद्यार्थियों की बाल्यावस्था को कच्चे घड़े की संज्ञा देते हुए ब्रह्मनिष्ठ बापू ने कहा :

''यदि बाल्यावस्था में ही बच्चों के अंदर भक्ति, ध्यान, संयम के संस्कार पड़ जाएँ तो बालक भौतिक उन्नति के साथ-साथ मानव जीवन के परम लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति भी शीघ्र ही कर सकता है।''

लोकलाडले पूज्य बापू ने विद्यार्थियों में निर्भयता का शंखनाद करते हुए आह्वान किया :

''तुम अपना आत्मबल बढ़ाओ। कठिन-से-कठिन कार्य को भी हिम्मत और बुद्धिपूर्वक आसानी से हल करने की विद्या सीखो। उन्नति के शिखर पर पहुँचना हो तो निराशा व दुर्बलता तुरन्त त्याग दो। बल ही जीवन है। दुर्बलता ही मृत्यु है। ऊँची आशा ऊँचे राह पर ले जाती है और निर्वासना परब्रह्म परमात्मा के अनुभव तक ले जाती है।''

योगनिष्ठ पूज्य बापू ने दुर्बलता लानेवाली प्रवृत्तियों

पर विजय पाने और मजबूत संकल्प का आश्रय लेकर आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। कुछ दिन तक नियमित रूप से सुबह उठकर हम अपने दोषयुक्त संस्कारों को उखाड़ फेंकने में कैसे सफल हो सकते हैं इसकी रीत उन्होंने बताई और प्रयोग भी कराये। प्राणायाम तथा अनेक यौगिक युक्तियों द्वारा आत्मशक्ति विकसित करने के प्रयोग कराते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''आत्मशक्ति ही सब सफलताओं की कुंजी है।''

इस त्रिदिवसीय विद्यार्थी उत्थान शिविर में भौतिक व आध्यात्मिक उत्थान की अनेक युक्तियों, कुंजियों से सुसज्ज होकर, एक नया उत्साह व उमंग लिये विद्यार्थीगण अपने घरों के लिए रवाना हुए। पूज्य बापू की आत्मीयतापूर्ण वाणी, प्रेम तथा अनुशासन के संगमरूप मार्गदर्शन दिल में संजोये, आशा की एक नई दिव्य किरण लिये, उच्च व उज्ज्वल जीवन की दीक्षा लिये परितृप्त हुए।

विद्यार्थी उत्थान शिविर की पूर्णाहुति होते ही बड़ों के लिए १८ से २० अक्तूबर, तीन दिवसीय **'वेदान्त शक्तिपात ध्यान योग साधना शिविर'** का शुभारंभ हुआ। विशाल मैदान में विशाल जनमेदनी को पूज्य बापू ने संकीर्णता छोड़कर विशाल हृदय बनाने की प्रेरणा दी। उन्होंने कहा : **''अपने अंतर को भक्ति से सजा लो। भगवद्सुख किसी वस्तु, किसी परिस्थिति, किसी अवस्था का विषय नहीं है। उस भगवद्सुख को प्रभुप्रेम व विशाल हृदय से ही पाया जा सकता है।''**

१९ अक्तूबर को विजयादशमी का पर्व हर्षोल्लास के वातावरण में संपन्न हुआ। रावण, कुंभकरण व मेघनाद के पुतले जलाये गये। विजयादशमी के पावन पर्व को सत्य की असत्य पर विजय बताते हुए पूज्य बापू ने जीवन को हर्षमय, आनंदमय, मधुमय बनाने की प्रेरणा दी। उन्होंने कहा : **''ईश्वर आनंदरूप हैं और उनके द्वारा बनाया गया पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश सभी कुछ मधुमय है। सृष्टि मधु का कोष है। मनुष्य अपनी नासमझी से ही इसे विषतुल्य बना लेता है।''**

दक्षिण-पश्चिम दिल्ली के वीरान स्थल पर बने इस सत्संग परिसर ने विशाल जनमेदनी से युक्त एक विशाल अध्यात्मनगरी का रूप धारण कर लिया था। पूर्णाहुति के दिन सभी शिविरार्थियों को नये वर्ष के कैलेण्डर अथवा आश्रम द्वारा निर्मित १०-१० रूपयों की सामग्रियाँ भेंटस्वरूप दी गईं।

आगरा : आगरा-मथुरा रोड पर स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में २४ से २६ अक्तूबर '९९ तक त्रिदिवसीय **'वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर'** व **शरदपूर्णिमा महोत्सव** का आयोजन हुआ। इसके पूर्व पिछले दो दिनों से यहाँ के बल्केश्वर कालोनी में सुरेशानंदजी के सान्निध्य में चल रहे **गीता भागवत सत्संग समारोह** की पूर्णाहुति २३ अक्तूबर को पूज्य बापू ने की। उन्होंने व्यावहारिक जीवन में उत्पन्न होनेवाले विषाद को दूर कर जीवन को आनंदमय बनाने के लिए उमंग, उत्साह, प्रसन्नता और माधुर्य से जीवन को सराबोर करने की प्रेरणा दी। सम, प्रसन्न, मधुर व स्वस्थ रहने के कुछ प्रयोग कराये जिससे ७२७२१०२०१ नाड़ियों पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। उस प्रयोग से मानों हलाहल कलियुग में सतयुग का संचार हुआ। सभी सत्संगियों ने ये आनंदमय प्रयोग किये। जिन्होंने किये वे अब भी याद करते हैं और सुखी जीवन की सुनहरी राह प्राप्त कर प्रसन्न हो रहे हैं। चित्त को चिन्ता और भय के भँवर से मुक्त करके निश्चिन्त होने के लिए, निजस्वरूप को पहचानकर जीवन्मुक्ति के विलक्षण आनंद का अनुभव करने के लिए भारतीय संस्कृति के योग और वेदान्त के अमोघ उपायों की चर्चा की तथा दैनिक जीवन में उसीकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

शरदपूर्णिमा महोत्सव पर उपस्थित विशाल जनमेदनी से सिकंदरा क्षेत्र में मिनी कुंभ-सा वातावरण बना रहा। श्रेष्ठ जीवन की कुंजियाँ बताते हुए लययोग, नादानुसंधान योग, कुण्डलिनी योग के अनुभवनिष्ठ पूज्य बापू ने सूत्रात्मक वाणी में कहा : **''अज्ञान का अंजन जिससे निवृत्त हो, वही विचार करें। जीवन की शाम हो जाये उसके पहले जीवनदाता को पाने का दृढ़ संकल्प करें। जिन विचारों, कर्मों से परमात्मसुख, परमात्मवैभव के करीब जायें वही विचार करें, वही कर्म करें। जिस प्रकार काँटे से काँटा निकाला जाता है वैसे ही सद्‌गुणों से दुर्गुणों को एवं सत्कर्मों से दुष्कर्मों को निवृत्त कर श्रेष्ठ जीवन की प्राप्ति करें।''**

शक्तिपात साधना शिविर के अंतिम दिन देश के दूर-सुदूर क्षेत्रों से बड़ी संख्या में साधकवृंद आये जिसमें प्रधानमंत्री श्री अटलजी की बहन, बहनोई व कुटुंबी भी भाग लेते रहे। साधकों को संबोधित करते हुए राष्ट्रसंत पूज्य बापू ने कहा : **''भारत उन्नति के राजमार्ग के करीब आ रहा है। भारत के दुर्दिन अब जाने को हैं। सन् २००० के बाद राष्ट्र अद्वितीय उन्नति की ओर अग्रसर**

होगा और विश्वगुरु की गरिमा तक चल पड़ेगा।''

पूज्य बापू के ये उद्गार सुनते ही आश्रम का प्रांगण हर्ष व तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। लोग जय-जयकार करने लगे। आत्मदर्शी ब्रह्मवेत्ताओं के वचन कभी निष्फल नहीं होते। पूज्यपाद बापू का यह शुभ संकल्प निश्चय ही रंग लायेगा।

सरमथुरा (उ. प्र.) : यहाँ मौन साधना-स्थली व संस्कार-स्थली संत श्री आसारामजी आश्रम का उद्घाटन पूज्यश्री के पावन करकमलों से २७ अक्तूबर '९९ को संपन्न हुआ। चंबल घाटी के इलाके के कई आपराधिक प्रवृत्ति के लोग भी इस संत श्री आसारामजी संस्कार धाम से प्रेरणा पाकर भक्ति और सेवामय जीवन की ओर चल पड़े। पूज्यश्री के कृपापात्र साधकों द्वारा सत्संग व भंडारे का कार्यक्रम चलता रहा। लोगों को ज्ञान-भक्ति के रंग में सराबोर कर पूज्यश्री हवाई मार्ग से ग्वालियर पधारे।

ग्वालियर : २८ से ३१ अक्तूबर '९९ के दौरान शिवपुरी लिंकरोड स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम में चार दिनों तक अध्यात्म की गंगा बहती रही। इस ऐतिहासिक भूमि में भूमिपूजन के साथ **ध्यान योग शिविर** का शुभारंभ हुआ। प्रतिदिन प्रातःकाल के शांत, शीतल, मधुर बेला में ध्यान के गहरे प्रयोग ध्याननिष्ठ पूज्य बापू द्वारा कराये जाते थे। ध्यान की गंगा में गोता लगवाते, आत्मस्पर्शी वाणी का रसास्वादन कराते हुए पूज्य बापू ने सुख के लिए बाह्य वस्तुओं, परिस्थितियों की गुलामी न कर अपने भीतर ही आत्मसुख पाने की कला सिखाई। उन्होंने कहा : **''संसार के सारे सुख-साधन जुटा लो, फिर भी पूर्ण सुख नहीं मिल सकता। पूर्ण सुख पूर्ण तत्त्व परमात्मा की प्राप्ति से ही संभव है।''**

उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली के अलावा मध्य प्रदेश के विभिन्न भागों से बड़ी संख्या में आये हुए भक्तों ने आध्यात्मिक प्रसाद प्राप्त कर अपने जीवन को सही दिशा में लगाया। बड़ी संख्या में उपस्थित लोगों को देखने से ऐसा लगता था मानों, वे भौतिक उन्नति व वर्त्तमान सामाजिक-राजनैतिक परिवेश से ऊब गये हैं। वे शांति चाहते हैं, आध्यात्मिक उन्नति करना चाहते हैं, शुद्ध प्रेम चाहते हैं, प्रेमाभक्ति का पावन सुख चाहते हैं। वास्तव में भारतीय संस्कृति अध्यात्मप्रधान संस्कृति है जो समस्त मानव समुदाय के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने का सामर्थ्य रखती है। ध्यान योग शिविर में पूज्य बापू द्वारा यही आध्यात्मिक प्रसाद सहज में ही प्रदान किया गया।

वडाली (गुज.) : साबरकांठा जिले के इस छोटे-से ग्राम में पूज्यश्री को लाने में वहाँ के भक्तों ने सफलता प्राप्त की। १४ से १६ नवम्बर '९९ के दौरान तीन दिवसीय सत्संग समारोह में पूज्य बापू ने ग्राम्य जनता को लोकभोग्य शैली में सत्संग-रस का पान कराया। इस छोटे-से ग्राम के लिए इतना बड़ा सत्संग कार्यक्रम अपूर्व ही था !

कोटड़ा (राज.) : १७ नवम्बर '९९ को राजस्थान के कोटड़ा क्षेत्र में विशाल भंडारे का आयोजन हुआ जिसमें हजारों की संख्या में आदिवासी व गरीब जनता शामिल हुई। राजस्थान में अकाल की तपन से तप्त गरीब आदिवासी भाई-बहनों ने अन्न, वस्त्र, दक्षिणा, बर्तन व मिठाई से तृप्ति का अनुभव किया मानों, दिवाली की खुशी का एहसास किया।

गाँधीनगर (गुज.) : ब्रह्मनिष्ठ पूज्यपाद बापू के सशक्त मार्गदर्शन में १८ से २१ नवम्बर '९९ के दौरान चार दिवसीय **'विद्यार्थी उत्थान शिविर'** संपन्न हुआ। विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए योगासन, प्राणायाम तथा ध्यान के यौगिक प्रयोग कराये गये। **वक्तृत्व-स्पर्धा** तथा **लिखित परीक्षा** के द्वारा व्यक्तित्व विकास के प्रयोग कराये गये। गुजरात की राजधानी गाँधीनगर में पहली बार आयोजित इस विद्यार्थी शिविर में गाँधीनगर, अमदावाद के अलावा दूर-सुदूर क्षेत्रों से आये हुए हजारों विद्यार्थियों ने तेजस्वी-ओजस्वी जीवन जीने की कुंजियाँ प्राप्त कर तदनुरूप अपना जीवन बनाने का संकल्प किया।

गुजरात की इस राजनगरी में राज्यपाल श्री सुन्दरसिंह भंडारी, मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल, आरोग्य और नागरिक आपूर्ति मंत्री श्री अशोकभाई भट्ट, नशाबंदी मंत्री श्री फकीरभाई वाघेला, तकनीकी शिक्षणमंत्री श्री भरतभाई बारोट, शिक्षा मंत्री आनंदीबहन पटेल, विधानसभा अध्यक्ष श्री धीरूभाई शाह तथा अन्यान्य राजनेताओं ने माल्यार्पण कर राजधानी में पूज्यश्री का अभिनंदन किया। केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुंदरलाल पटवा विशेष रूप से गुरुदेवश्री के दर्शन-सत्संग से लाभान्वित होने के लिए दिल्ली से गाँधीनगर आये और घंटों मंत्रमुग्ध हो पूज्यश्री की आत्मस्पर्शी अमृतवाणी का रसपान करते रहे।

उन्होंने अपने संबोधन में कहा : **''श्री केशुभाई घुटने की तकलीफ के कारण कुर्सी पर बैठें, वह ठीक है**

पर गुरुदेवश्री के सामने मैं कुर्सी पर बैठूँ यह अनुचित है... मुझे कष्ट होता है। पूज्य बापू से मेरी प्रार्थना है कि वे मुझे नीचे बैठने की अनुमति दें। परम पूज्य बापू को लाख लाख प्रणाम...''

मुख्य मंत्री श्री केशुभाई पटेल ने शिवरार्थियों को सौभाग्यशाली बताते हुए कहा : **''यह शिविर नहीं महाशिविर है। ऐसे महाशिविर में संस्कार-सिंचन का यज्ञ किया गया है। गुजरात के मुख्यमंत्री होने के नाते मैं आप सभी शिविरार्थियों का और बापू के साधकों का अभिवादन करता हूँ।''**

आरोग्य और नागरिक आपूर्ति मंत्री श्री अशोकभाई भट्ट ने विद्यार्थी उत्थान शिविर के समापन अवसर पर अपने संबोधन में कहा : **''१९वीं सदी ने विश्व को स्वामी विवेकानन्द, ऋषि दयानंद, गाँधीजी, तिलकजी दिये। अभी २०वीं सदी पूरी हो रही है। २१वीं सदी पूछेगी कि 'तुम क्या दे रहे हो?' तो हम कहेंगे कि लोकमांगल्य के कार्य करनेवाले संत आसाराम बापू दे रहे हैं।''**

*

उड़ीसा में आश्रम द्वारा राहतकार्य

उड़ीसा : (नवम्बर '९९) उड़ीसा में आये हुए भयानक तूफान से पीड़ित क्षेत्रों में आश्रम द्वारा युद्धस्तर पर सेवा एवं राहत कार्य किये जा रहे हैं। वहाँ सेवाधारियों की तीन तुकड़ियाँ अलग-अलग स्थानों पर सेवाकार्यों में रत हैं, जिनका संचालन २२ नवम्बर '९९ तक पूज्यश्री स्वयं प्रतिदिन टेलिफोन द्वारा करते रहे हैं। ऐरी बीना, सानिलो, सरुना, मठाशाही ग्राम, बलदुआ, आसाशीना, डिगोरिया, नालीरो, रानाकी, पियो आदि बाढ़पीड़ित क्षेत्रों में जात-पाँत या संप्रदाय के भेदभाव के बिना ८० अन्नक्षेत्र चालू किये जा चुके हैं। वहाँ से भूखी-प्यासी जनता को निःशुल्क खाद्य सामग्रियाँ प्रदान की जा रही हैं। इसके अतिरिक्त आश्रम की ओर से कम्बल, कपड़े, टेन्ट, लालटेन, दवाइयाँ आदि सामग्रियाँ भी निःशुल्क वितरित की जा रही हैं। सेवाधारियों का उत्साह बढ़ाने के लिए प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य श्री गुरुदेव विमान द्वारा दिनांक : २२ नवम्बर को अमदावाद से उड़ीसा के लिए रवाना हुए। वहाँ पहुँचने के बाद उड़ीसा के मुख्यमंत्री डॉ. गिरधर गोमांगो ने पूज्यश्री के साथ क्षतिग्रस्त क्षेत्रों का सर्वेक्षण हवाई तथा पैदल मार्गों से किया।

उड़ीसा के मुख्यमंत्री पूज्य गुरुदेव के दर्शन हेतु दो बार अमदावाद आश्रम में आये थे मगर सफल न हुए। अब पूज्य गुरुदेवश्री का सान्निध्य व मार्गदर्शन प्राप्त कर अपने-आपको धनभागी मानते हैं।

*

अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२ से ५ दिसम्बर '९९	जमशेदपुर	सत्संग समारोह	–	जी टाउन मैदान, साउथ पार्क, बिस्तुपुर, जमशेदपुर।	(०६५७) ४२४८७८, ४२३८९३.
९ से १२ दिसम्बर '९९	नागपुर	सत्संग समारोह	सुबह १० से १२ शाम ३ से ५	कमलेश्वर रोड, फेटरी	(०७१२) ६६७२६७, ६६७२६८.
१६ से १९ दिसम्बर '९९	हैदराबाद	सत्संग समारोह	–	निजाम कॉलेज ग्राउण्ड, हैदराबाद।	(०८४१३) २२७५७, २२१०३.
२१ से २३ दिसम्बर '९९	सूरत आश्रम	ध्यान योग शिविर	–	संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत।	(०२६१) ६८५३४१, ६८७९३६.
२४ से २६ दिसम्बर '९९	सूरत आश्रम	विद्यार्थी उत्थान शिविर	–	संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत।	(०२६१) ६८५३४१, ६८७९३६.
१४ से १६ जनवरी २०००	अमदावाद आश्रम	उत्तरायण की ध्यान योग शिविर	–	संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद।	(०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

पूर्णिमा दर्शन : २२ दिसम्बर '९९ सूरत आश्रम में।

POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH. POSTING FROM MUMBAI 9-10 OF EVERY MONTH. POSTING FROM DELHI 10-11

DELHI REGD. NO. DL-11513/99 PSO L[illegible]
R.N.I. NO. 48873/91 W.P.P LIC. NO [illegible]
MUMBAI, BYCULLA PSO LIC. NO. 031.

गुजरात की राजधानी गाँधीनगर में आयोजित विद्यार्थी ध्यान योग शिविर में आकर पूज्यश्री से लाभान्वित
भाग्यशाली विद्यार्थियों के भाग्य की प्रशंसा करते हुए मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल। साथ में हैं केन्द्रीय मंत्री श्री सुंदरलाल पटवा एवं स्वास्थ्य मं[illegible]

कभी पैदल तो कभी हेलिकॉप्टर में उड़ीसा के क्षतिग्रस्त इलाकों का अवलोकन करते हुए मुख्यमंत्री श्री डॉ. गिरधर गोमांको के साथ प्राणिमात्र के [illegible]

उड़ीसा में आये तूफान से पीड़ित लोगों के लिए अमदावाद आश्रम की ओर से ८० अन्नक्षेत्र चालू किये जा चुके हैं।
भूखी-प्यासी ज़नता को निःशुल्क खाद्य सामग्रियाँ एवं कम्बल, कपड़े, टेन्ट, लालटेन, दवाईयाँ आदि भी निःशुल्क वितरित करते हुए समि[illegible] के साधक